CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१५९

# तत्वार्थसूत्र - पद्याञ्जलि

मुनिवर उमास्वामि रचित मोक्षशास्त्र
'तत्वार्थसूत्र' पर आधारित गीतकाव्य

इन्हें समर्पित है यह शास्त्र

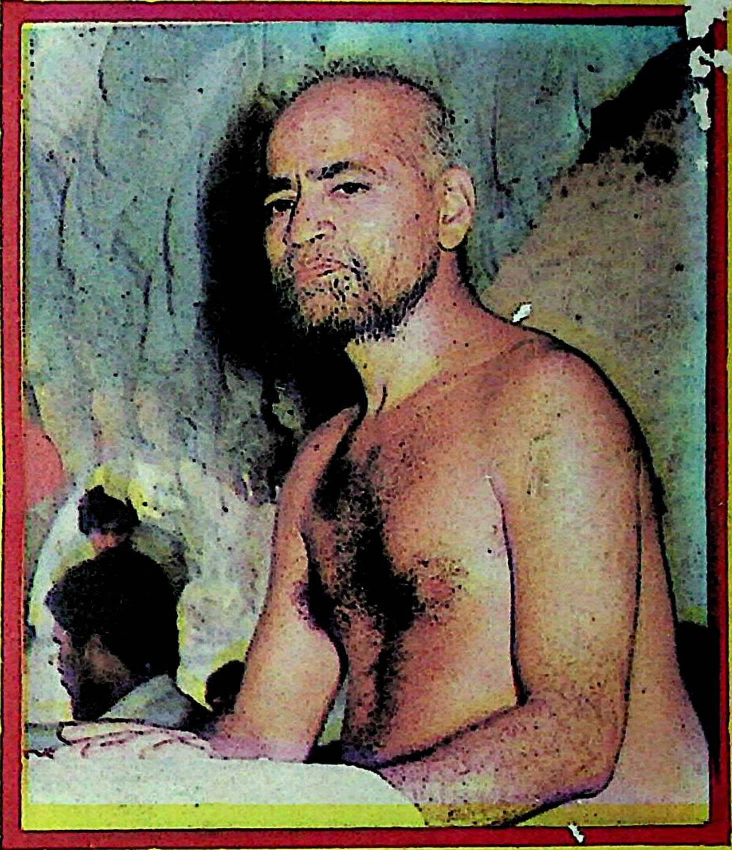

चारित्र चक्र वर्ती जैनाचार्य १०८ श्री विद्यासागर जी

[जन्म- शरद पूर्णिमा सं० २००३, सदलगा बेलगाँव ]
पिता- श्री मल्लप्पा जी (मुनि मल्लिसागर जी)
माता- श्रीमती (आर्यिका समयमती जी)
मुनिदीक्षा असाढ़सुदी ५, सं० २००५, आचार्य पद- अगहन वदी २, सं० २०२९

सिंघई धन्नालाल जैन, शास्त्री
एम० एस० सी. टैक. कानपुर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

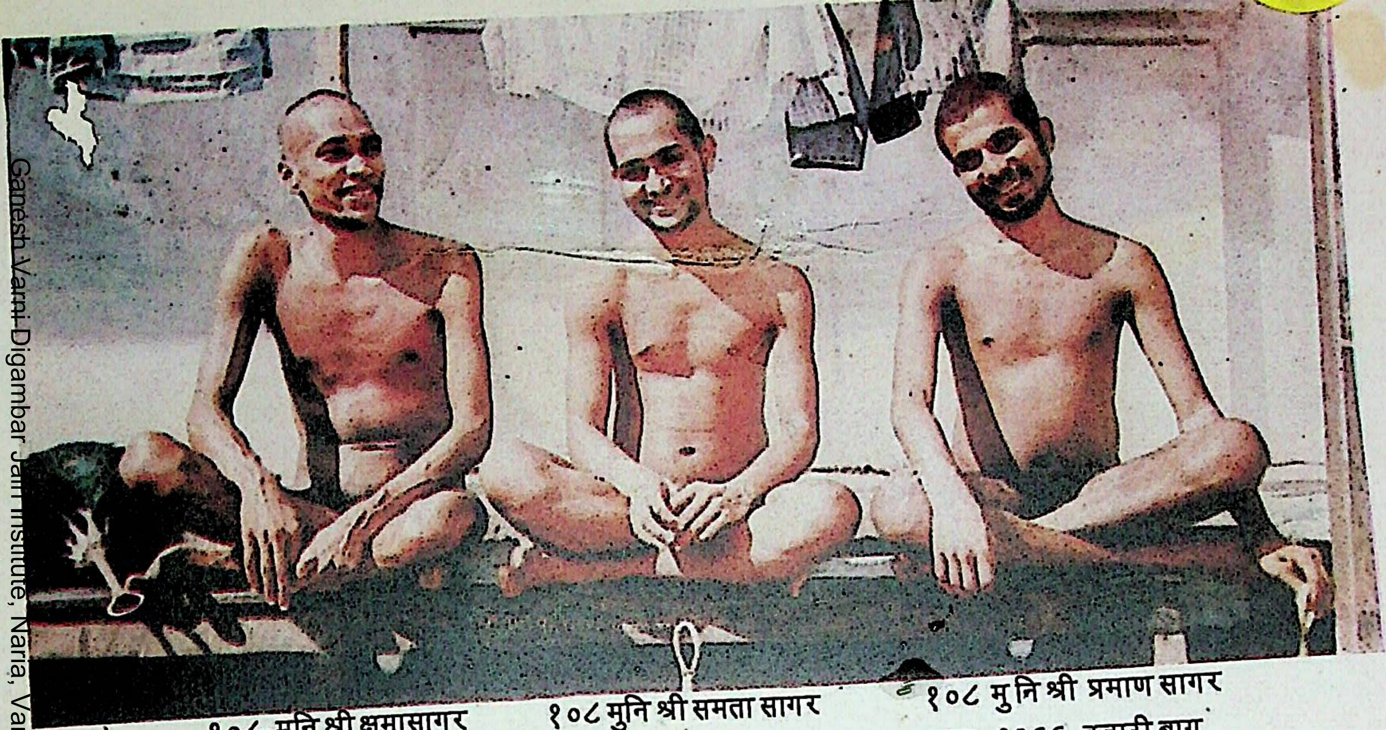

१०८-मुनि श्री क्षमासागर
जन्म : सितंबर ५७, सागर
नाम : सिंघई वीरेन्द्र कुमार
शिक्षा : एम० टैक०
मूनि दीक्षा : सितं ८२, नैनागिर

१०८ मुनि श्री समता सागर
जन्म : १३ जुलाई १९६२
नन्हीं देवरी (सागर)
नाम : प्रवीण कुमार
मुनि दीक्षा : २५.९.८३ (ईसरी)

१०८ मुनि श्री प्रमाण सागर
जन्म : १९६६, हजारी बाग
विहार प्रदेश
नाम : नवीन कुमार
मुनि दीक्षा : ३१.३.८८, सोनागिर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नमः श्री वर्धमानाय

# तत्वार्थ सूत्र पद्याञ्जलि

जिन आगम प्रणेता, पूज्यवाद आचार्य
उमास्वामि (गृद्धपिच्छाचार्य) द्वारा रचित
तत्वार्थ सूत्र
पर आधारित गीतिकाव्य

रचनाकार
**सिंघई धन्नालाल जैन शास्त्री**
केमिकल इंजीनियर
118/179 कौशलपुरी, कानपुर

प्रकाशक

**जैन मिलन, कानपुर**
118/179 कौशलपुरी कानपुर

**सन्मति जैन परिषद**
108/32 महावीर स्वामी मार्ग
लैनिन पार्क कानपुर

यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि जैन दर्शन के मौलिक ग्रन्थ "तत्वार्थ सूत्र" की प्रथम पद्य की रचना महाकाव्य के रुप में सिंघई धन्ना लाल जैन शास्त्री, एम० सी० टैक के द्वारा रचित की गई है। श्री धन्नालाल ३० वर्ष की शासकीय सेवा के पश्चात् भी धार्मिक प्रभावना से जुड़े हुये हैं और उन्होंने संस्कृत वाङ्गमय वाले तत्वार्थ सूत्र जैसे ग्रन्थ को हिन्दी भाषा के पद्य के रूप में समाज को समर्पित करने का संकल्प किया जो प्रशंसनीय है। मैं इस पद्य रचना का अनुमोदन करता हूँ।

पूज्यवाद आचार्य गृद्ध पिच्छ रचित तत्वार्थ सूत्र की मान्यता जैन धर्म के अनुयायियों में सर्वविदित है संस्कृत का ज्ञान रखने वाले श्रृद्धालु तत्वार्थ सूत्र का भावार्थ ग्रहण करने में कुछ कठिनाई अनुभव करते हैं। मैं आशा करता हूँ कि ऐसे सभी श्रृद्धालु जनों के लिये यह सरल व सुबोध पद्य रचना तत्व ज्ञान कराने में निमित्त बनेगी।

(ह०) फूलचन्द्र शास्त्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



# आत्म निवेदन

भगवान महावीर की धर्मदेषणात्मक दिव्य ध्वनि का प्रसार गौतम गणधर द्वारा होने के पश्चात आचार्य परम्परा में दिगम्बराचार्य पूज्य कुन्दकुन्द का नाम श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता है जिन्होंने विदेह क्षेत्र जाकर सीमंधर स्वामी के समोशरण में उसी तत्वोपदेश को सुना। और प्राकृत भाषा में समयसार, नियमसार, रयणसार, अष्ठपाहुड़ की रचना कर भगवान के दिव्य-उपदेशों को जन साधारण तक पहुँचाया। इन्हीं की शिष्य परम्परा में आचार्य उमास्वामी ने संस्कृत वाङ्मय में आद्यग्रंथ तत्वार्थ सूत्र की रचना कर भव्यों का महान उपकार किया। संसारी अन्तहीन कष्टों से भयभीत जीवों को कष्टों से मुक्ति एवं शास्वत निराकुल सुख निधान मोक्ष के उपाय हेतु "सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्ग" से रचना प्रारम्भ करने वाले आचार्य प्रवर की करुणा से ओतप्रोत शुद्ध भावना का परिचय मिलता है।

तत्वार्थसूत्र के प्रणेता श्री उमास्वामी दक्षिणात्य ब्राह्मण मूल के दिगम्बर मुनि थे जिन्होंने प्रथम शताद्वी के अंत या द्वितीय के प्रारम्भ में भूतल को अलंकृत किया। आप अनेक ऋद्धि संपन्न थे। आपके शरीर के स्पर्श मात्र से पवित्र वायु हालाहल को भी अमृत बनाने में सक्षम थी। आकाश गामी ऋद्धि के भी आप धनी थे। एक बार मयूर विच्छ गिर जाने पर ग्रद्ध के पंखों की पीछी से आपने काम लिया था अतः ग्रध्रपिच्छ नाम भी आपके साथ जुड़ गया। दिगम्बर और श्वेताम्वर दोनों सम्प्रदायों में उमास्वामी (उमास्वाति) कृत तत्वार्थसूत्र की (किञ्चित पाठभेद से) महान श्रद्धापूर्वक मान्यता है। इसके पठन मात्र से एक उपवास

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


का फल प्राप्त होता है। संसार शरीर और भोगों की नश्वरता देखकर जो भव्यजीव मोक्षमार्ग में लगकर, आत्मगुणों पर अनादिकाल से जमी कर्म पटल का पर्त हटाकर, अनन्तदर्शन, ज्ञान, सुख तथा अनन्तवीर्य गुणों के शास्वत स्वामित्व का सुख भोगना चाहते हैं उन्हें यह ग्रन्थ महान हितकारी लगेगा। पर कषाय-रंजित मोह पाश से जकड़े जो प्राणी अपनी संकीर्ण दृष्टिवश मात्र इस लोक और परलोक के सुधारने के लालच में उलझे हैं उन्हें भी करुणा निधान मुनिवर ने अणुव्रतादि पुण्य क्रियाओ का उपदेश देकर मार्ग दर्शन दिया है। उन्होंने मानसिक पवित्र। अपवित्र भावनाओं को नर त्रियंचादि त्रासमयी खोटी गतियों का कारण निरुपित करते हुए, अशुभ कार्यों से विरक्ति एवं शुभ कार्यों की ओर जन मानस को प्रेरित किया है। इतना ही नहीं, विवेचना की सूक्ष्मता में जाकर पर निन्दा और आत्मप्रशंसा को नीचगोत्र का हेतु निरुपित किया है। ज्ञान, अज्ञान अथवा प्रमादवश किये गये अनुचित कार्यों की समीक्षात्मक आलोचना एवं प्रायश्चित के द्वारा ही मानव खोटे कार्यों से विरत होकर, आत्मशुद्धि के मार्ग में लग सकता है। इस भाँति भगवान के श्रीमुख से खिरी दिव्य ध्वनि (उपदेश) को सागर में गागर के समान तत्वार्थसूत्र में समाहित कर आचार्यवर ने अपने आध्यात्मिक जीवन के तत्पश्चर्यात्मक मंथन द्वारा प्राप्त अमृत हमें प्रदान किया हैं।

दिगम्बर मुद्रा धारण करने के वैराग्य भाव तो अतिशय पुण्यवान प्राणियों को ही होते हैं ऐसे महापुरुषों को किञ्चित निमित्त पाकर मायामोह से विरत होने में देर नहीं लगती। पर साधारण ग्रहस्थों को व्रतों का ज्ञान, व्रत पालन में सहायक भावनाएं, दोषों के बचाव हेतु अतिचारों आदि का सटीक वर्णन, निश्चय ही जीवनोद्धार का मार्ग प्रशस्त करता है। इन सब का जितना तार्किक व सूक्ष्म विवेचन जो तत्वार्थसूत्र में किया गया है वह अन्यत्र दुर्लभ ही है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



वर्तमान युग में व्यक्ति धन - अर्जन में इतना लिप्त हो गया है कि उसे न्यायोचित रूप से अर्जन का ध्यान नहीं रहता। आचार्य समझाते हैं कि धन धान्यादि तो पुण्य कर्म का अवश्यम्भावी फल है। अतः पुण्यार्जन हेतु पुरुषार्थ ही सार्थक है।

मोक्षशास्त्र तत्वार्थसूत्र एक अनुपम निधि है। यह एक पारमसणि है जो दूषित मानस से आयस कालिमा हटाकर स्वर्ण - प्रभ दीप्त ज्ञान से भर देता है। ग्रंथ की भाषा संस्कृत होने के कारण कठिनाई अनुभव करने वाले जनों के लिए सरल सुबोध एवं हृदयग्राही पद्य रचना की गई है। सर्वार्थसिद्धि का आश्रय लेकर अनेक स्थलों पर सूत्रार्थ से आगे बढ़कर विस्तृत विवेचन किया गया है इस पद्याञ्जलि का प्रथम बाचन पं० फूलचन्द्र जी सिद्धान्तशास्त्री (अव स्वर्गीय) के समक्ष हुआ। क्षुल्लक ध्यान सागर जी ने इसे ध्यान पूर्वक पढ़कर दिशाबोध दिया। पश्चात प्रातः स्मरणीय चरित्र चक्रवर्ती आचार्य विद्यासागर जी महाराज एवं उनके शिष्य प्रवर १०८ मुनि क्षमा सागर, १०८ मुनि समता सागर, १०८ मुनि प्रमाण सागर के समक्ष वाचन एवं परिष्करण होकर पद्याञ्जलि प्रतिष्ठित हुई। इसके पश्चात भी यदि कहीं सुधार की आवश्यकता कल्याणार्थी पाठक देखें तो कृपाकर सूचित करें। सम्भाव्य त्रुटियों के लिए सदैव क्षमाप्रार्थी हूँ।

जैन धर्म की शिक्षा पाकर जीवन सार्थक करूं इस भावना से साढूमल पाठशाला भेजते समय पिता श्री हज़ारीलाल व पितृतुल्य भाई कुन्दनलाल (ललितपुर) की आकांक्षाओं को किञ्चित साकार होते देख प्रसन्नता का अनुभव होता है। प्रत्येक बन्धु व माता बहिनों से जिन दर्शन का मर्म समझ कर धर्माराधना की ओर अग्रसर होने की विनती है।

कानपुर — सिंघई धन्नालाल जैन शास्त्री
६ फरवरी १९९३ — केमिकल इंजीनियर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



## तत्वार्थ सूत्र पूजन

स्थापना जिन मुखोद्‌भूत ओंकार ध्वनी का
प्रति ध्वनित यह रूप विमल।
तत्वार्थसूत्र बन्दन से जन
होते निष्पाप और निरमल ॥
इस द्वारशांग वाणी के प्रति
मैं करता हूँ शतवार नमन।
गौतम गणधर अरु कुन्दकुन्द
आचार्यों को नितप्रति बन्दन ॥

जन जन तक पहुंच सकी जग में जिनके प्रताप से जिन वाणी।
उन उमास्वामि की मोक्ष शास्त्र रचना से लाभान्वित प्राणी ।।
हे मंगलमूरत ज्ञानसूर्य मिथ्यात्व अंध विध्वंस करो।
उज्जवल सद्ज्ञान ज्योति देकर आलोकित यह जीवन कर दो ।। २

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्‌भूत द्वादशांगवाणि स्वरूप तत्वार्थसूत्र
अत्र अवतर अवतर। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः।
अत्र मम हृदयस्थितो भव। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत।

जलं यह जग आसार नाते रिश्ते झूठे, सब मन को भरमाते।
निर-आकुल शास्वत सुख भूले प्राणी को विषय भोग भाते ।।
मिथ्यात्व महातम से लिपटे, चौरासी लाख योनि भ्रमते।
प्राणी को सम्यक्‌दरश ज्ञानही सुपथ दिखा, अघमल हरते ।।
जीवों को सुपथ दिखाने में उज्वल प्रकाश दे जिनवाणी।
ओंकार रूप जिनमुखोद्‌भूत गणधर प्रतिपादित कल्याणी ।।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्‌भूत द्वांदशांगवाणी स्वरूप तत्वार्थसूत्राय
नमः जलं निर्वपामि इति स्वाहा।

चन्दनम् इच्छित पदार्थ पाने को क्रोधादिक कषाय में लिप्त रहा।
अरू जो मन को अच्छे न लगे, उनके प्रति कलुषित भाव गहा।
यों रागद्वेष की ज्वाला में झुलसा, संतप्त भ्रमा जग में।
मय अहोभाग्य प्रभुवाणी से लगगया शान्तिसुख के मग में ।।
जीवों को -------।

अक्षतं: निजकी अनन्त अक्षय निधियों से विमुख निरन्तर यह प्राणी।
भूले भटके को निजानन्द सुख राह दिखाती जिनवाणी ।।
चेतन अनन्त सुख ज्ञानमयी यों बोध अमित सुख का साधन।
भ्रम कांच कुमति से हटा, चित्त में रमें आत्म कुन्दन का धन ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



जीवों ------।

पुष्पं: यह काम कषाय मिटे जब मन में कुमतभाव होते विनष्ट।
खोटे विचार, खोटी परिणति के बीज सदा फल दें अनिष्ट।।
जो शील स्वभावी हों उनके सारे सु-कार्य मंगलकारी।
शिक्षा देता यह पुष्प - सरलता वश सिरमौर विभा धारी।।
जीवों को -----।

नैवेद्यं: अतिभूख सताती बालक को जिसका विवेक से काम नहीं।
जप तप संयम में रमे सजग को क्षुधारोग का भान नहीं।।
यम नियम और संयम विन जीवन अनियंत्रित होता निष्फल।
यदि रंच मात्र सुख शान्ति चहो तो संयम का गहलो सम्वल।।
जीवों को -----।

दीपं: मिथ्यात्व अंधवश जीव नहीं शुद्धात्म रूप पहिचान सके।
यह दीप किरण यह रवि प्रकाश वह गहन अंधनहिं छान सके।।
अतएव दीप अर्पित करके मैं ज्ञान ज्योति पाने आया।
है जिनवाणी !तत्वार्थ ज्ञान दे दूर करो भ्रम की छाया।।
जीवों -----।।

धूपं: यह अग्निदाह जग में पदार्थ को भस्मसात कर पाती है।
पर अशुभ कर्म युग युग वांधे उनको यह नहीं जलाती है।
इच्छा निरोध - तप के द्वारा ज्ञानी जन कर्म जलाते हैं।
अतएव अग्नि में धूप दहन कर तप भावना जगाते हैं।।
जीवों को -----

फलं: दुख से भयभीत जगतप्राणी सुख की नित अभिलाषा करते।
पर घोर दुखों के बीच क्षणिक सुख मेंही भरमाये रहते।
निर - आकुल सुख जो शिवस्वरूप उसके प्रति मम अनुराग जगे
शिव प्राप्ति हेतु खोटे कर्मों से हो विरक्ति, शुभभाव जगे।।
जीवों को ----

अर्घ - संसार देह अपने न हुये, इनसे ममभाव घटे निशदिन।
परभव सुधारने में निमित्त परदोष दृष्टि टूटे प्रति दिन।
शिव प्राप्ति हेतु संतोष वृत्ति से जीवन यापन ध्यान रहे।
नित न्याय नीति संयम शुचिता की पुण्यरूप पहिचान रहे।।
जीवों को ----।।

जयमाला तत्वार्थ ज्ञान बिन प्राणी निज पर में अन्तर नहिं जान सके।
पर में ममत्व का भाव लिये निज निधिको नहिं पहिचान सके।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



सुख की अभिलाषा लिये सदा दुख के उपाय नित अपनाता।
सन्मार्ग प्रदर्शक देवशास्त्र गुरु को पहिचान नहीं पाता।

दुख के सागर में ढूंडे सुख, यह सदा कूप मण्डूक रहा।
दुख से उबारने वाली जिनबाणी का आलम्बन न गहा।।
दुख दलितों के उद्धार हेतु मुनि उमास्वामि का ध्यान गया।
तत्वार्थ सूत्र की रचना कर मुनिवर ने शिव-सुख मार्ग कहा।।

वस तत्व अर्थ के ज्ञान और सच्ची श्रद्धा से कुमति नशे।
पर को परमान त्यागने का शुभभाव जगे, सन्मति विलसे।।

विषय भोग क्षणभंगुर जीवन - जल वुद्, वुद, सम नश्वर सत्य।
अज्ञ मोहवश इन्हें नित्य माने यों चिन्तन कहा अनित्य।।
जनम मरण अरू जरा रोग से ब्यथित जीव को शरण न और।
अशरण अनुप्रेक्षा चिन्तन में धर्म सहायी देता ठौर।।

यह संसार असार सभी नाते रिश्ते झूंठा व्यवहार।
यों विराग पोषक विचार संसार भावना के आधार।।
जन्मे, मरे, कर्मफल भोगे एकाकी यह जीव सदैव।
कोई न बांटे दुख, यों चिन्तन अनुप्रेक्षा एकत्व तथैव।।

जड़ शरीर अरू चेतन का जल पय सम मिलन, नहीं ध्रुव सत्य।
चेतन को जड़ भिन्न जान निस्पृहता मंथन है अन्यत्व।।
रूधिर राधमल मलिन घृणास्पद, नव द्वारों से देह मलीन।
अशुचि देह से मोह क्षीण मय भाव अशुचि करते मलक्षीण।।

योगों की चंचलता मूलक कर्मास्रव भव दुख का मूल।
इस आस्रव के अवरोधक जन धर्म ध्यान में करें न भूल।।
आस्रव का अवरोधी संवर क्षमा धर्म आदिक से साध्य।
संवर अनुप्रेक्षा में नितप्रति शुद्ध वृत्ति चिन्तन आराध्य।।

फल देकर जब कर्म खिरें, निर्जरा नहीं वह आती काम।
तप कर कर्म खिपाने का ही भाव यथार्थ निर्जरा नाम।।
लोक अनादि अकृत्रिम शास्वत इसमें भ्रमते पाते कष्ट।
लोक भावना में यों चिन्तन युक्ति करे नित विपद विनष्ट।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



दुर्लभ त्रस पर्याय मिलन, रत्नत्रय, परम अहिंसा धर्म।
व्यर्थ न जावे दुर्लभ नरभव यही वोधि दुर्लभ का मर्म।।
स्वाख्या तत्व धर्म अनुप्रेक्षा जीव धर्म से बने महान।
धर्म निराकुल सुखदाता धर्मालम्बन से हो निर्वाण।।

ऊं ह्रीं जिनमुखोद्भूत द्वादशांग वाणी स्वरूप तत्वार्थ सूत्राय पूर्णार्धं निर्वपामीति स्वाहा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्व तत्वानाम् बन्दे तद्गुणलब्धये।

[ मोक्षमार्ग का निर्देश ] सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्गः ।१
तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।।२

[ सम्यग्दर्शन लक्षण ] तन्निसर्गादधिगमाद्वा ।।३

मनुष्य-त्रियंच गति में सम्यग्दर्शन

देवगति में सम्यक्त्व

नरक गति में सम्यक्त्व

[ तत्वों का नाम - निर्देश ] जीवा जीवास्रव बन्ध संवर निर्जरामोक्षास्तत्वम् ।४

[ निक्षेपों का नाम - निर्देश ] नाम स्थापना द्रव्यभावतस्तन्यासः ।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



नमः श्री वर्धमानाय

आचार्य उमास्वामि ग्रद्धपिच्छ

द्वारा रचित

तत्वार्थ सूत्र पर आधारित

## तत्वार्थ सूत्र पद्याञ्जलि

मोक्ष मार्ग के नेता जिनवर कर्म शैल भंजक भगवन।
विश्वतत्व ज्ञाता हे प्रभुवर गुणगण लब्धि निमित्त नमन ॥

सम्यक दर्शन ज्ञान और चारित्र मिलन शिवमग है मित्र।
तत्व अर्थ की सच्ची श्रद्धा सम्यक दर्शन परम पवित्र ।।
सम्यक दर्शन द्विविध, निसर्गज और अधिगमज रूप प्रसिद्ध।
पर उपदेश बिना स्वबोध से प्रकट, निसर्गज स्वतः समृद्ध ।। १

स्वतः तीर्थंकर को भव त्रय से, कुछ को नैसर्गिक उत्पन्न।
पुण्यवान कुछ प्राणिजनों को वह अधिगम द्वारा परिजन्य ।।
नर त्रियंच को जातिस्मरण, सुगुरु श्रद्धा, जिनवर दरशन।
धर्मश्रवण का योग प्राप्त कर होय उदित सम्यक दर्शन ।। २

देव योनि में धर्मश्रयण जिन महिमा उत्सव का उल्लास।
जाति स्मरण देवऋद्धी-दर्शन से हो सम्यक्त्व प्रकाश ।।
जातिस्मरण सुधर्म श्रवण अति कष्ट वेदना की अनुभूति।
तीन नरक तक नारकियों को सम्यक दरश निमित्त विभूति ।। ३

जीव अजीवास्रव वंधन संवर निर्जरा सु मोक्ष महान।
सप्त तत्व जिनवर प्रतिपादित इनका ज्ञान महा सुख खान ।।
इन तत्वों के विशद बोधहित रीति मुनीश्वर कही वखान।
नाम थापना द्रव्य भाव से होती व्यवहारिक पहिचान ।। ४

नोट- तीर्थंकर प्रकृतिवंध के पश्चात् यदि जीव को नरकगति जाना पड़े तो अन्तर्मुहूर्त तक सम्यक दर्शन छूट जाता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| [तत्वज्ञान-उपाय] | प्रमाण नयैरधिगमः ।६ |
| | निर्देश स्वामित्व साधनाधिकरण स्थिति विधानतः ।७ |
| | सत्संख्या क्षेत्र स्पर्शन कालान्तर भावाल्पबहुत्वैश्च ।८ |
| [सम्यग्ज्ञान भेद] | मतिश्रुतावधि मनः पर्यय केवलानि ज्ञानम् ।९ |
| [प्रमाण चर्चा] | तत्प्रमाणे ।१० |
| | आद्ये परोक्षम् ।११ प्रत्यक्षमन्यत् ।१२ |
| [मतिज्ञान] | मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ।१३ |
| [मतिज्ञान-निमित्त] | तदिन्द्रियानिन्द्रिय निमित्तम् ।१४ |
| मतिज्ञान भेद] | अवग्रहेहावायधारणाः ।१५ |

[ज्ञान के विषय १२ पदार्थ] बहुबहुविध क्षिप्रानिःसृतानुक्त ध्रुवाणां सेतराणाम् ।१६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


नय प्रमाण से हो तत्वों का विशद ज्ञान, फिर भी निर्देश-
स्वामी साधन और अधिकरण थिति विधान दें ज्ञान विशेष ।।
सत्संख्या क्षेत्र स्पर्शन अरु कालान्तर भावों से पूर्ण ।
अल्प बहुत वसु अनुयोगों से तत्वज्ञान होता परिपूर्ण ।।५

मति श्रुत अवधि मनः पर्यय अरु केवल ज्ञान, पंचविध ज्ञान ।
वह प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणित, हैं परोक्ष मति औ श्रुतज्ञान ।।
अवधि मनः पर्यय अरु केवल ज्ञान रहें प्रत्यक्ष प्रमाण ।
अभिनिवोध संज्ञा चिन्ता स्मृति मति ये मति के ही प्रतिनाम ।।६

पंचेन्द्रिय मन के निमित्त से मति सु ज्ञान होता उत्पन्न ।
अवग्रह ईहावाय धारणा भेद चतुष्टय से सम्पन्न ।।

विषय और विषयी सम्बन्धित प्रथम गृहणरूपी संज्ञान ।
है अवग्रह जैसे पदार्थ लखि श्वेतरूप आकृति का भान ।।७

पुनि विशेष आकांक्षा के वश, ईहा-मति जिज्ञासा रूप ।
यथा दृष्टिगत आकृति वगुला है कि पताका ध्यान स्वरूप ।।
ईहा से इंगित पदार्थ का निर्णय ही अवाय मतिज्ञान ।
जैसे पंख फड़कने उड़ने से बगुला की दृढ पहिचान ।।८

इस विध प्राप्त पदार्थ ज्ञान की कालान्तर में हो नहिं भूल ।
यों परिणति धारणा कहाती ज्ञान ज्योति की है जो मूल ।।

बहु बहुविध क्षिप्रानिसृत अरु ध्रुव अनुक्त एवं विपरीत ।
एक एकविध उक्त अध्रुव अक्षिप्र सु निसृत दशा पुनीत ।।९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अर्थस्य ।१७

अर्थावग्रह
व्यंजनावग्रह

व्यञ्जनस्यावग्रहः ।१८। न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ।१९

[श्रुतज्ञान] श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


द्वादश भेद अर्थ के ज्ञाता अवग्रहादिक सभी समर्थ।
इन्द्रिय मन के विषयभूत द्वादश पदार्थ कहलाते अर्थ।।

अर्थावग्रह व्यक्त और अव्यक्त अर्थ का सीमित ज्ञान।
प्रकट अर्थ की धूमिल प्रज्ञा, व्यंजन अवग्रह है मतिज्ञान।।१०

मनश्चक्षु अ-प्राप्यकारि, नहिं जानें अक्षविषय, कर स्पर्श।
नेत्र बसे अंजन नहीं देखे चक्षु, पुष्टि करती निष्कर्ष।।
ज्यों कुछ जलकण सिंचन से मृत्पात्र आर्द्रता रहे अव्यक्त।
पुनः पुनः जल सिंचन से गीलापन हो जाता अभिव्यक्त।।११

इन्द्रिय कृत शब्दादि रूप-व्यंजन त्यों व्यक्त न हों कछुकाल।
इनका प्रथम ग्रहण स्वरूप लघु ज्ञान व्यंजनावग्रह माल।।
व्यक्तग्रहण-अर्थावग्रह के पूर्व व्यंजनावग्रह ज्ञान।
मनश्चक्षु से व्यंजन अवग्रह होने का नहिं अतः विधान।।१२

व्यंजन के अवग्रह ही होता नहिं ईहादिक, यह अविवाद।
संभव है श्रुतज्ञान नियमतः मति-सु-ज्ञान होने के बाद।
पंचेन्द्रिय मन जनित अवग्रह आदि गुणित चौबीस प्रभेद।
द्वादश अर्थगुणित दो शत अट्ठासी अर्थ-अवग्रह भेद।।१३

व्यंजन अवग्रह, अक्ष चार से गुणित अवग्रह, द्वादश अर्थ।
अड़तालीस मिला त्रयशत छत्तिस प्रभेद मतिज्ञान समर्थ।।
अंगवाह्य अरु अंग-प्रविष्ट उभय प्रभेद रखता श्रुतज्ञान।
अंगवाह्य के भेद विविध पुनि द्वादश अंग-प्रविष्ट सुजान।।१४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



| | |
|---|---|
| [अवधिज्ञान] | भव प्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ।२१ |
| | क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ।२२ |
| [मनःपर्ययज्ञान] | ऋृजुविपुलमती मनःपर्ययः ।२३ |
| | विशुद्ध्य प्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ।२४ |
| [अवधि मनःपर्यय ज्ञानों में सूक्ष्मता] | विशुद्धि क्षेत्र स्वामिविषयेभ्योऽवधिमनः-पर्ययोः ।२५ |
| [ज्ञानों की सीमा] | मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ।२६ |
| | रूपिष्ववधेः ।२७ |
| | तदनन्तभागे मनः पर्ययस्य ।२८ |
| | सर्वद्रव्य पर्यायेषु केवलस्य ।२९ |
| | एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ।३० |
| विपर्यय ज्ञान] | मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ।३१ |
| | सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धे रुन्मत्तवत् ।३२ |
| नय | नैगम संग्रह व्यवहारर्जुसूत्र शब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ।३३ |

इति प्रथमोध्यायः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


देवनारकी जीवों को भव प्रत्यय अवधि जन्मतः मान्य।
मनुज त्रियंच धरैं गुण प्रत्यय अवधि, क्षयोपशमिक प्रतिमान।।
गुण प्रत्यय षट भेद अवधि अनुगामी अननुगामि अनुरूप।
वर्धमान अरु हीयमान अनवस्थित और अवस्थित रूप।।१५

मन पर्यय के युग भेदों में ऋजुमति और विपुलमति ज्ञान।
अप्रतिपाति विशुद्धि गुणों से हो विशिष्टता की पहिचान।।
क्षेत्र विशुद्धि स्वामि विषयों से जो अन्तर हो विविध प्रकार।
अवधि और मन पर्यय में होता विशिष्टता का आधार।।१६

कुछ पर्यायों सहित सभी द्रव्यों को जाने मति श्रुतज्ञान।
रूपी द्रव्यों की पर्यायें सावधि लखता अवधि सु ज्ञान।।
अवधि अनन्तेभाग सूक्ष्मता करे मनः पर्यय परकाश।
सर्वद्रव्य पर्यायें पातीं युगपत केवल ज्ञान प्रकाश।।१७

एक जीव के युगपत सम्भव एक, अधिकतम चतु तक ज्ञान।
मति श्रुत अवधि विपर्यय भी हो सकते, जिनमत का आख्यान।।
मिथ्यात्वी न गहें विशेषता सत अरु असत पदार्थों बीच।
वे उन्मत्त सदृश, स्वेच्छाचारी बन फंसे विवादों कीच।।१८

नैगम संग्रह व्यवहारी ऋजुसूत्र शब्द अभिरूढ़ तथैव।
एवम्भूत सप्त नय मूलक अधिगम बस्तु स्वरूप सदैव।।

नैगम से संकल्पबोध हो संग्रह दे समूह का ज्ञान।
वस्तु विषय का भेद रूप में नय व्यवहार कराता ज्ञान।।१९
छोड़ भूत भावी पर्यायें वर्तमान गहता ऋजुसूत्र।
एक वस्तु लिंगादि भेद से वर्णन करे शब्द नय सूत्र।।
विविध अर्थ तज समभिरूढ़ नय रूढ़ि नाम करतां स्वीकार।
एवम्भूत अर्चना काले मात्र पुजारी धरै विचार।।२०

इति प्रथमोऽध्यायः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


जीव के स्वतत्व ५ भाव ] औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च ज़ीवस्य
स्वतत्वमौदयिक पारिणामिकौ च ।१
द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रिभेदा यथाक्रमम् ।२

औपशमिक भाव ] सम्यक्त्व चारित्रे ।३

क्षायिकभाव ] ज्ञानदर्शनदान लाभ भोगोपभोग वीर्याणि च ।४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



## द्वितीयोऽध्यायः

औपशमिक क्षायिक मिश्रित औदयिक पारिणामिक निजभाव।
ये पांचों ही भाव जीव के आत्मतत्व का ल हें प्रभाव।।
इन पांचों भावों के क्र मशः दो नव अष्टादश इक्कीस।
तीन भेद, सम्पूर्ण मिलाकर, त्रेपन भाव कहें जगदीश।।१

औपशमिक के युग भेदों में पहिला औपशमिक सम्यक्त्व।
औपशमिक चारित्र रूप में दूजे का होता अस्तित्व।।
अनन्तानुबन्धी कषाय चतु क्रोध मान माया अरु लोभ।
पुनि मिथ्यात्वपना, सम्यक मिथ्यात्व प्रकृति, सम्यक्त्व सुयोग।।२

मोह कर्म की सप्त प्रकृतियों के उपशम मय उज्वल भाव।
औपशमिक सम्यक्त्व रूप लें पंक शमित जल यथा प्रभाव।।
मोह कर्म की शेष प्रकृतियों के उपशम ही के अनुरूप।
औपशमिक चारित्र भाव की परिणति का पहिचानों रूप।।३

गलित पंक सम, मोह प्रकृतियों के क्षय का पाकर संयोग।
जो शुचि निरमल भाव उपजते वे क्षायिक होते शुभयोग।।
ज्ञान-सु-दरशन दान लाभ परिभोग और उपभोग प्रवीर्य।
सम्यक चारित मिल होते नव (९) क्षायिक भाव, कहें गुणवर्य।।४

यथा रसायन (फिटकरी) की लघु मात्रा जल से पंक निकाले अल्प।
मलिनामलिन शेष जल सम क्षायोपशमिक भावों का कल्प।।
कर्मों के क्षयो-पशम से प्रस्फुटित जीव के जो निज भाव।
वे क्षायोपशमिक कहलाते, थिर शुचिता का वहां अभाव।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


क्षायोपशमिकभाव ] ज्ञानाज्ञान दर्शन लब्धयश्चतु स्त्रित्रि पञ्चभेदाः सम्यक्त्व चारित्र संयमासंयमाश्च ।५

[औदयिक-भाव ] गतिकषाय लिङ्ग मिथ्यादर्शनाज्ञाना संयता सिद्धलेश्या-श्चतुश्चतुस्त्रयेकैकैकैकषड्भेदाः।६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



ये क्षायोपशमिक अष्टादश ज्ञान प्रथम चतु, त्रय अज्ञान।
दर्शन त्रिविध, लब्धि पांचों सम्यक्त्व और चारित्र सुजान।।
जोड़ संयमासंयम, अठदश भाव क्षयोपशमिक पहिचान।
इन भावों के भी प्रभेद का आगे छन्द कराता ज्ञान।।६

ज्ञानों के प्रभेद में मति श्रुत, अवधि, मनःपर्यय चतुज्ञान।
कुमति कुश्रुत संग, कुअवधि मिलकर हो जाते त्रयविध अज्ञान।।
चक्षु अचक्षु अवधि दर्शन यों दर्शन के त्रय रूप सुजान।
चक्षु दर्शनावरण आदि के ही क्षयोपशम से प्रकटान।।७

दान लाभ भोगोप भोग पुनि वीर्य, लब्धियाँ होतीं पांच।
अन्तराय पन (५) के क्षयोपशम से हों प्रकट, कथन यह सांच।।
ग्रद्धपिच्छ आचार्य बताते अब इक्कीस औदयिक भाव।
कर्मोदय निमित्त संचित जो पुण्य पाप फल रखें प्रभाव।।८

चतुगति चार कषाय लिंग त्रय मिथ्यादर्शन अरु अज्ञान।
एक असंयत असिद्धत्व षट्लेश्या भाव औदयिक मान।
गति कर्मोदय से त्रियंच नर देव नारकी गति चतुरूप।
क्रोध मान माया प्रलोभ हों मोह कषाय उदय अनुरूप।।९

बेद नाम जब नोकषाय का उदय जीव के होता भ्रात।
स्त्री पुरुष नपुंसक लिंगों में से एक लिंग हो प्राप्त।।
मिथ्यादर्शन भाव जगै मिथ्यात्व मोहनी उदय स्वभाव।
ज्ञानावरण उदय आने पर जीव लहै अज्ञान प्रभाव।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


[पारिणामिक भाव] जीवभव्याभव्यत्वानि च ।७

[जीव की पहिचान] उपयोगो लक्षणम् ।८
स द्विविधोष्ट चतुर्भेदः ।९

[जीवों के भेद] संसारिणो मुक्ताश्च ।१०
[संसारी जीव] समनस्कामनस्काः ।११
[भेद-प्रभेद] संसारिणस्त्रसस्थावराः ।१२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


चरित मोह के सर्व घाति स्पर्धक उदय असंयत लाय।
द्रव्य कर्म का उदय मात्र ही असिद्धत्व परिणति उपजाय।।
कृष्ण नील कापोत पीत अरु पद्‌म शुक्ल लेश्या के भाव।
ये कषाय अनुरंजित योगों की परिणति सम रखें प्रभाव।। ११

प्रथम तीन लेश्या में पहिले से चौथे तक हों गुणथान।
पीत पद्‌म लेश्या में सप्तम गुणस्थान तक का आख्यान।।
गुणस्थान प्रथमादि त्रयोदश तक सु शुक्ल लेश्या संयोग।
गुणस्थान चौदहवें में लेश्या का किंचित भी नहिं योग।। १२
(स्वार्थसिद्धि २३/४०)

उपशम क्षय क्षयोपशम कर्मोदय निरपेक्ष उदित जो भाव।
द्रव्य स्वभाव परिणमन मूलक, कहे पारिणामिक निजभाव।।
भाव पारिणामिक त्रय क्रम में सबसे प्रथम रहा जीवत्व।
अभव्यत्व रत्नत्रय क्षमताहीन, मोक्षसाधक भव्यत्व।। १३

चेतन मय उपयोग जीव का लक्षण, द्विविध कहा उपयोग।
प्रथम ज्ञान-उपयोग रूप पुनि इतर कहा दरशन-उपयोग।।
अष्ट भेद ज्ञानोपयोग, पन (५) ज्ञान, तीन कुज्ञान स्वरूप।
चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल दरशन उपयोग चतुर्विध रूप।। १४

जीव द्विविध, संसारी अरु जो कर्म बंध से हुये विमुक्त।
संसारी समनस्क और अमनस्क रूप में रहें विभक्त।।
संसारी जीवों के भी त्रस थावर रूप कहे युग भेद।
ये चौरासी लाख योनियों में भ्रमते पाते दुख खेद।। १५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



[स्थावर-जीव] प्रथिव्यप्तेजोवायु वनस्पतय: स्थावरा: ।१३

[त्रसजीव] द्वीन्द्रियादयस्त्रसा: ।१४

[इन्द्रियां] पंचेन्द्रियाणि ।१५ द्विविधानि ।१६

[द्रव्येन्द्रियां] निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ।१७

[भावेन्द्रियां] लव्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।१८

स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु:श्रोत्राणि ।१९

स्पर्शरस गन्धवर्ण शब्दास्तदर्था: ।२०

श्रुतमनिन्द्रियस्य ।२१

[इन्द्रियों के स्वामी] बनस्पत्यन्तानामेकम् ।२२

कृमिपिपीलिका भ्रमर मनुष्यादीना-
मेकैकवृद्धानि ।२३

संज्ञिन: समनस्का: ।२४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



प्रथिवी जल अरु अग्नि, वनस्पति, वायुकाय, थावर पन रूप।
दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक हों त्रस-जीव कर्म-अनुरूप।।
इन्द्रिय पांच कहीं जिनवर ने द्रव्येन्द्रिय भावेन्द्रिय रूप।
द्रव्येन्द्रिय निवृत्ति उपकरणों के विभाग से पुन दो रूप।।१६

पुद्गल प्रचय रूप इन्द्रिय रचना निर्वृत्ति कही मुनिनाथ।
रचना के साधक साधन उपकरण नाम से होते ज्ञात।।
भावेन्द्रिय के रूप पुनः दो, प्रथम लब्धि भावेन्द्रिय रूप।
पुनि दूजा उपयोग नाम से भावेन्द्रिय का लहै स्वरूप।।१७

चक्षु, अचक्षु, दर्शनावरणी अरु मति ज्ञानावरण विभाव।
दे इनका क्षयोपशम दर्शन ज्ञान शक्ति, वह लब्धि स्वभाव।।
लब्धि अवस्था में जब चेतन, द्रव्येन्द्रिय रचना के काज।
उद्यत हो, वह आत्मपरिणमन ही उपयोग कहा मुनिराज।।१८

स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु अरु श्रोत्र, कहे पंचेन्द्रिय नाम।
संस्पर्शन रस गंध वर्ण शब्दादि ग्रहण ही इनका काम।।
जब श्रुत ज्ञानावरण कर्म का हो क्षयोपशम, तब यह जीव।
प्राप्त करे श्रुत ज्ञान मन-विषय, मन आलम्बन लिये सदैव।।१९

प्रथिवी काय आदि जो चेतन बनस्पती कायक पर्यन्त।
उन्हें मात्र संस्पर्शन इन्द्रिय प्राप्त रहे, कहते गुणवन्त।।
कृमि पिपीलिका भ्रमर नरादिक में इक इक इन्द्रिय की वृद्धि।
संज्ञी जीव कहे जाते वे जिनमें मन की रहे समृद्धि।।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



२५

| | |
|---|---|
| [पर्याय-परिवर्तन में गति नियम] | विग्रहगतौ कर्मयोगः ।२५ |
| | अनुश्रेणि गतिः ।२६ |
| | अविग्रहा जीवस्य ।२७ |
| | विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ।२८ |
| | एक समयाविग्रहा ।२९ |
| | एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ।३० |
| जन्म-प्रकार] | संमूर्च्छनगर्भोपपादा जन्म ।३१ |
| [जन्माधार ९ योनियां] | सचित्तशीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैक-शस्तद्योनयः ।३२ |
| ·र्भ-जन्म] | जरायुजाण्डज पोतानां गर्भः ।३३ |
| [उपपाद-जन्म] | देवनारकाणामुपपादः ।३४ |
| [सम्मूर्च्छन जन्म] | शेषाणां संमूर्च्छनम् ।३५ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


हित अनहित सुविचार और गुण दोष ज्ञान संज्ञी को प्राप्त।
विग्रह गति में कर्मयोग गत्यन्तर साधन बनें सनाथ।।
विग्रह-नूतन देह, हेतु गति विग्रहगति कहते मुनिनाथ।
नभ प्रदेश की पंक्ति श्रेणि दे जीवाजीव गमन में साथ।।२१

कर्मबन्ध निर्मुक्त जीव की गति होती नित विग्रह हीन।
तीन समय तक प्राणी विग्रह और अविग्रह गति आधीन।।
विग्रह बिन ॠजु गति में केवल एक समय रहता ठहराव।
बपु विन इक, दो, तीन, समय तक आहारक पन से न लगाव।२२

त्रय शरीर, षट पर्याप्ती के योग्य पुद्गलों का आदान।
आगम की भाषा में वह होता आहार, आप्त आख्यान।।
सम्मूर्च्छन गर्भोपपाद लें त्रिविध जन्म प्राणी जगमांहि।
परितः पुद्गल पिण्ड बनावें देह, कहें सम्मूर्च्छन ताहि।।२३

शीत, अशीत, सचित्त, अचित्त, सुसंवृत,वि-वृत्त मिश्र स्वरूप।
शीत-उष्ण, संवृत-विवृत, सच्चित्ताचित्त योनि नव रूप।।
लख चौरासी योनि भटकते जीवों को नव जन्म प्रदाय।
होतीं नव योनियां सहायक, कर्म-उदय अनुरूप लखाय।।२४

अण्डज, पोत, जरायुज प्राणी गर्भ जन्मधारी अनिवार्य।
कंगारू सम निरावरण जन्मों को पोत कहें आचार्य।।
देव नारकी जन्म लहें उपपाद शिला पर, लें बहुरूप।
शेष जीव सम्मूर्च्छन जन्मी यही प्रकृति का नियम अनूप।।२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





[पांच-शरीर] औदारिक वैक्रियिकाहारक तैजस कार्मणानि शरीराणि ।३६

औदारिक-शरीर]

वैक्रियिक-शरीर]

आहारक-शरीर]

तैजस-शरीर]

कार्मण-शरीर]

तैजस-अन्तर्मुखी]

तैजस-बहिर्मुखी]

शरीरों में उत्तरोत्तर सूक्ष्मता] परं परं सूक्ष्मम् ।३७

प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ।३८

अनन्तगुणे परे ।३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



औदारिक वैक्रियिक और आहारक तैजस कार्मण रूप।
पांच रूप तन रचना पाकर जीव शरीर धरैं बहुरूप ।।
औदारिक अवरोध रूप तन मूर्तिमान अवरोधक मित्र ।
अणिमादिक वसु रिद्धि युक्त वैक्रियिक देह हो विविध विचित्र ।। २६

नर तिरयंच जीव धारण करते नाना औदारिक देह ।
देव नारकी जीवों को वैक्रियिक प्राप्त हो निस्संदेह ।।
सूक्ष्म तत्व निर्णय हित या कि असंयम-घाति भाव संयोग ।
मुनि मस्तक से पुतला उपजे एक हाथ का सौम्य मनोज ।। २७

ऐसा अतिशय आहारक पाते शरीर, मुनिवर निष्काम ।
षष्ठम गुणस्थान-स्वामी सुप्रमत्त विरत ध्यानी अभिराम ।।
तेज पुंज में जन्में, दीप्ति प्रसारक, जग में तैजस ख्यात ।
ज्ञानावरणादिक कर्मों का ही समूह कार्मण हो ज्ञात ।। २८

तैजस अन्तर्मुखी रहे औदारिक आदि देह-त्रय माहिं ।
बहिर्मुखी तैजस घातक जब, अशुभ नाम देते मुनि ताहि ।।
उग्र तपस्वी द्वीपायन सम द्वादश योजन करे विनाश ।
शुभ तैजस दुर्भिक्ष रोग आदिक नाशै, पुनि करे विकास ।। २९

औदारिक शरीर से आगे सूक्ष्मपने की हो अभिवृद्धि ।
प्रथम तीन परमाणु दृष्टि से असंख्यात गुणवान समृद्ध ।।
आहारक से गुण अनन्त परमाणुवान तैजस आकार ।
तैजस तन से गुण अनन्त परमाणु धरै कार्मण वपु सार ।। ३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अप्रतीघाते ।४०

अनादिसम्बन्धे च ।४१

सर्वस्य ।४२

तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ।४३

निरुपभोगमन्त्यम् ।४४

औदारिक-शरीर] गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यम् ।४५

[वैक्रियिक-शरीर] औपपादिकं वैक्रियिकम् ।४६

लब्धि प्रत्ययं च ।४७

तैजसमपि ।४८

शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ।४९

वेद [लिङ्ग] नारक संमूर्च्छिनो नपुंसकानि ।५०

न देवाः ।५१

शेषास्त्रिवेदाः ।५२

अकाल मृत्यु जयी जीव] औपपादिक चरमोत्तम देहाऽसंख्येय वर्षायुषोनपवर्त्यायुषः ।५३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



अन्तिम दो हैं प्रतीघात विन, मूर्तिक-पर से बाधा हीन।
आत्मा से अनादि सम्बन्धी कर्म-उदय परिणति आधीन।।
तैजस कार्मण देह जगत के सभी जीव के हों अनिवार्य।
इन्हें आदि ले चतु शरीर तक या पाते प्राणी व्यवहार्य।। ३१

निरुपभोग कार्मण शरीर है, जब प्राणी विग्रह गति लीन।
इन्द्रिय विन, होता शब्दादिक ग्रहण योग्य उपभोग विहीन।।
गर्भ और सम्मूर्च्छन जन्मों से औदारिक हों उत्पन्न।
देव नारकी हों उपपादी, देव वैक्रियिक वपु सम्पन्न।। ३२

तपश्चरण से प्राप्त लब्धि से मिले विक्रिया रिद्धि पवित्र।
प्राप्त रहे तैजस शरीर को तैजस ऋद्धि तथैव विचित्र।।
आहारक तन अति शुभकारी परम शुद्ध व्याघात विहीन।
इसके अधिकारी हों षष्ठम गुणथानी मुनिराज प्रवीण।। ३३

नारकि अरु सम्मूर्च्छन जन्मी जीव नपुंसक हों अनिवार्य।
देव नपुंसक हों नहिं, स्त्री पुरुष वेद उनको स्वीकार्य।।
स्त्री, पुरुष, नपुंसक तीनों वेद लहें मानव तिरयंच।
उपल घास बन अग्नि सदृश परिणाम धरें, संशय नहिं रंच।। ३४

देव नारकी, उपपादी, चरमोत्तम देह वान भवि जीव।
वर्ष असंख्य आयु के स्वामी भोग भूमि के प्राणि सदैव।।
अनपवर्त्य आयुष वाले हों, इनका घटै न आयु वितान।
इनकी हो न अकाल मृत्यु, ये पूर्ण आयु का करते पान।। ३५

इति द्वितीयोऽध्यायः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


सजनरक ] रत्नशर्करा बालुका पङ्कधूमतमोमहातमः
प्रभाभूमयो
घनाम्बुवाताकाश प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ।१

भूमियों की स्थिति का आधार ]

लोकाकाश ]
अलोकाकाश ]
लोकाकाश-आकार प्रकार ]

ऊर्ध्व लोक ]
मध्यलोक ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


तृतीयोऽध्याय:

रत्नप्रभा शर्करा बालुका पंक धूम्रवत प्रभा वितान।
तमः महातम प्रभा सप्त ये अधोलोक की भूमि प्रधान।।
उक्त घनोदधि बातवलय थिर, जो घन बात बलय आधार।
वह तनु बातबलय आश्रित, आकाश सभी का है आधार।।१

सुस्थिर पुनि स्वप्रतिष्ठ लोक-आकाश सभी को दे अवगाह।
लोकाकाश अनादि अकृत्रिम घेरे जिसे अलोक अथाह।।
उत्तर दक्षिण, अधोऊर्ध्व में सप्तराजु विस्तार प्रमाण।
पूरब पश्चिम की चौड़ाई नीचे सप्त राजु परिमाण।।२

सप्तराजु ऊँचाई पर चौड़ाई घटत रहे इक राजु।
साढ़े दश की ऊँचाई पर यह चौड़ाई पांच सु राजु।।
चौदह राजु उतंग पहुँचते एक राजु चौड़ाई मान।
कटि पर हाथ, पांव फैलाये खड़े मनुज सम आकृतिजान।।३

अधोलोक विस्तार शताधिक छयालीस घनराजु प्रमाण।
ऊर्ध्वलोक विस्तार एक शत सैंतालिस घन राजु बखान।।
असंख्यात योजन मिलने पर एक राजु बन पाता मित्र।
योजन की परिभाषा का विस्तृत वर्णन खोजो अन्यत्र।।४

ऊर्ध्वलोक में बसें देवगण अधोलोक नारकि आवास।
नर त्रियंच मधिलोक मांहि द्वीपोदधि आश्रित करें निवास।।
सर्वव्यापि एकेन्द्रिय प्राणी, त्रस नाली त्रस जीव सुथान।
लम्बी चौड़ी एक राजु वह, उन्नत चौदह राजु प्रमान।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अधोलोक

नरकों के रूढ़िनाम ]

| | |
|---|---|
| नरक-आवास (पटल) | तासु त्रिशंत्पञ्चविशंति पञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैक नरक शत सहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ।२ |
| [ नारकियों की मनस्थिति लेश्यादि ] | नारका नित्याशुभतरलेश्या परिणाम देह वेदना विक्रियाः।३<br>परस्परोदीरित दुखाः ।४<br>संकिलष्टासुरोदीरित दुःखाश्च प्राक्चतुर्थ्याः ।५ |
| नरकों में आयु ] | तेष्वेकत्रि सप्तदश सप्तदश द्वाविंशति त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा स्थितिः ।६ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अधोलोक में रूढ़िनाम से धम्मा वंशा मेघा थान।
अरु अन्जना अरिष्ठा मघवा मघवी सप्त नरक दुखखान।।
रत्नप्रभा त्रयभाग विभाजित उपरिभाग खरभाग पिछान।
पंक भाग, अव्बुहल भाग से तीनों की होती पहिचान।। ६

रत्नप्रभा खरभाग भूमि में राक्षस असुर छोड़ अतिरिक्त।
देव भवनवासी अरु व्यंतर, वसते निज निज श्रेणि विभक्त।।
पंकभाग में असुर भवनवासी राक्षस व्यंतर संवर्ग।
अधोभाग-अव्वहुल नरक में बसें नारकी के बहुवर्ग।।७

इन में क्र मशः तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह, दस लाख।
तीन, पांच कम एक लक्ष, पुनि पांच नरक बिल जिनमत भाख।।
भूमि मध्य थोपे ढ़ोलक सम नरक बिलों में होती पोल।
इनमें कुछ कुछ चतुष्कोण, कोई त्रिकोण, कुछ होते गोल।।८

नित्य अशुभ लेश्या परिणाम, शरीर वेदना विकृतिवान।
जीव नारकी लड़ैं परस्पर कलहशील, दारुण दुख खान।।
तीन भूमि तक क्लेष स्वभावी, असुरों से पाते बहु कष्ट।
कलह कराकर, पूर्वबैर बतला जो करते शान्ति विनष्ट।।९

इन नरकों में आयु अधिकतम सागर एक, तीन अरु सात।
दस, सत्रह, बाईस अरु तेतिस सागर तक क्र मशः प्रख्यात।।
अशुभ कर्म वश नर त्रियंच ही नरकों में होते उत्पन्न।
नारकि देव न जांय नरक में, यद्यपि पाप प्रभाव विपन्न।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


नरकों के कष्ट

नरकों में जन्म नियम]

नरक गति से
नर त्रियंचगति ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



नरकों के दारुण कष्टों की व्यथा सुनाते कहते आप्त।
सागर भर जल प्यास धरैं पर बूंद एक पानी नहि प्राप्त।।
विपुल अन्न भण्डार भूख पर दाना एक न दे दुर्भाग्य।
राध, रुधिर नद में जीवन्धारा प्रवाह देता बस भाग्य।।११

प्रथम नरक तक जांय असंज्ञी पंचेन्द्रिय प्राणी तिरयंच।
दूजी तक उदराश्रितगामी गिरगिट सरीसृपादि परंच।।
तृतिय नरक तक पक्षीगण अरु चौथे तक जावें सर्पादि।
पंचम भू तक जन्म लहें, अति क्रूरवृत्ति वाले सिंहादि।।१२

छठे नरक तक जन्म लहें निज इष्ट विनाशी नारी वर्ग।
पाप बोझ ले सप्तम भू तक जाते मनुज मत्स्य संवर्ग।।
अति दारुण दुख भोग नारकी, हों गर्भज तिरयंच मनुष्य।
भूत्रय के नारकि नर बनकर तीर्थंकर हो सकें अवश्य।।१३

तीजी भू से निकल नारकी कर सकते निज पर कल्याण।
मनुज़ योनि में जप तप संयम धर कर पा सकते निर्वाण।।
सप्तम भू तजि नारकि होते गर्भज पंचेन्द्रिय तिरयंच।
जो रहते मिथ्यादृष्टी सम्यक, सम्यक-मिथ्यात्व न रंच।।१४

छोड़ नरकगति मनुजगती में जन्में जीव न हों बलदेव।
चक्रवर्ति अरु बासुदेव पदवीधारी होते न तथैव।।
रत्नप्रभा खरभाग पृष्ठ पर मध्यलोक सी रचना भूर।
पर्वत द्वीप समुद्र सरोवर वृक्ष नदादिक से भरपूर।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



मध्यलोक का वर्णन ]

द्वीप-समुद्र

जम्बूद्वीप लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ।७

द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ।८

जम्बूद्वीप-वर्णन ]

तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ।९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



इसी भूमि में भवनवासि व्यंतर देवों के हैं आवास।
देववृन्द भूत्रय तक विचरण करते, किन्तु न करें निवास।।

मध्यलोक में अगणित जम्बूद्वीप लवण-युक्त द्वीप समुद्र।
शुभ नामावलि से जो शोभित अन्त स्वयम्भूरमण प्रसिद्ध।।१६

प्रथम द्वीप जम्बू को घेरे लवणोदधि हो बलयाकार।
लवणोदधि को वेष्टित करता खण्ड धातकी गोलाकार।।
द्वीप उदधि विस्तार उत्तरोत्तर द्विगुणित, यों प्रकृति-विधान।
जम्बू द्वीप व्यास से द्विगुणित व्यास लवण सागर प्रतिमान।।१७

थाली सम गोलाकृति जम्बू का इक लख योजन विस्तार।
इसके मध्य मेरु गिरि राजित नाभिवृत्त शोभा आगार।।
मेरु महागिरि भूतल ऊपर तीन काण्ड में भाजित जान।
प्रथम काण्ड भूतल से योजन पंच शतक उन्नत परिमाण।।१८

साढ़े बासठ सहस समुन्नत काण्ड दूसरा कहा जिनेश।
तृतिय काण्ड की ऊंचाई छत्तिस हजार योजन परिवेश।।
सभी काण्ड के अन्तछोर पर एक एक कटनी विन्यास।
पंच शतक योजन विस्तृत प्रति कटनी, अंतिम में षट ह्रास।।१९

चार बनों से वेष्टित यह गिरि, उच्चभाल पाण्डुक परिवेश।
नन्दन अरु सौमनस मध्यगत भद्रसाल बन अधः प्रदेश।।
चार बनों में सोलह जिन चैत्यालय रहें अकृत्रिम भव्य।
पाण्डुक बन की चार दिशा में पाण्डुक शिला चार ज्ञातव्य।।२०

तीर्थंकर के जन्म समय नित पाण्डुक शिला उपरि अभिषेक।
देव इन्द्र देवेन्द्र रचाते मंगल उत्सव प्रमुख अनेक।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| जम्बूद्वीप में ७ वर्षाक्षेत्र ] | भरत हैमवत हरिविदेहरम्यक हैरण्यवतैरावत वर्षाः क्षेत्राणि।१० |
| षटवर्षधर पर्वत ] | तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरक्मि शिखरिणो वर्षधरपर्वताः।११ |
| पर्वतों के रंग ] | हेमार्जुन तपनीय वैडूर्य रजत हेममयाः।१२ |
| पर्वतों की छवि व आकार ] | मणि विचित्र पार्श्वाः उपरिमूले च तुल्य विस्ताराः।१३ |
| षट ह्रद ] | पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरि महापुण्डरीक पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि।१४ |
| प्रथम-ह्रद का विस्तार ] | प्रथमो योजन सहस्र ायामस्तदर्ध विष्कम्भोह्रदः।१५ |
| | दशयोजनावगाहः।१६ |
| ह्रनदमध्य कमल ] | तन्मध्ये योजनं पुष्करम्।१७ |
| | ताद्विगुण द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च।१८ |
| कमलवासिनी देवियां ] | तन्निवासिन्यो देव्यः श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक परिषत्काः।१९ |
| १४ महानदियां ] | गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता सीतासीतोदानारीनरकान्ता सुवर्णरूप्यकुला रक्तारक्तोदाःसरितस्तन्मध्यगाः।१९ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



जम्बूद्वीप मध्य शोभित हैं भरत हैमवत वर्षक्षेत्र।
हरि विदेह रम्यक हिरण्यवत ऐरावत ये सप्त सु क्षेत्र।।२१

पूरब से पश्चिम तक राजित षट सु वर्षधर परवत ज्ञात।
सप्तक्षेत्र भाजित करते हिमवान महा हिमवान सु ख्यात।।
निषध नील रुक्मी शिखरिन ये छहों रहें शोभित बहुभांति।
लें हेमार्जुन, तप्त स्वर्ण, वैडूर्य, रजत, सोने सी कान्ति।।२२

उभय पार्श्व इन वर्षधरों के मणि मुक्तावलि खचित मनोज्ञ।
ऊर्ध्व मध्य अरु अधोभाग में सम विस्तार धरैं शुभयोग्य।।
वर्षधरों के उपरि पद्म महपद्म तिगिञ्छ केशरी ताल।
महा पुण्डरिक, पुण्डरीक ये षट ह्रद होते महा विशाल।।२३

इक सहस्र योजन लम्बा अरु चौड़ाई में अर्ध प्रमाण।
दश योजन गहराई लेकर प्रथम जलाशय क्षेत्र महान।।
प्रथम सरोवर मध्य कमल पुष्कर योजन अवगाहन वान।
आगे आगे ह्रद पुष्कर के द्विगुणित विस्तृत क्षेत्र वितान।।२४

कमल मध्य निर्मित उज्जल भवनों में है जिनका आवास।
वे श्री ह्री धृति कीर्ति, बुद्धि लक्ष्मी करतीं देवियां निवास।।
इन पुष्करवासिनी देवियों की आयू रहती इक पल्य।
ये सामानिक और पारिषद देवों के संग बसैं निशल्य।।२५

भरतादिक में बहती चौदह नदियां-गंगा सिन्धु महान।
रोहित रोहितास्य पुनि हरित सु हरिकान्ता अमृत पय दान।।
सीता सीतोदा नारी नरकान्ता स्वर्ण रूप्य कूलाभ।
रक्ता रक्तोदा जल देकर जन मानस को दें अतिलाभ।।२६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



नदियों का उद्गम ] द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ।२१

सागर में लोप ] शेषास्त्वपरगाः ।२२

नदी-परिवार ] चतुर्दश नदी सहस्रपरिवृता गंगासिन्ध्वादयो नद्यः।२३

भरतक्षेत्रविस्तार ] भरतः षड्विंशति पञ्चयोजनशतविस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ।२४

अन्य क्षेत्र ] तद्द्विगुण द्विगुण विस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ।२५

उत्तरा दक्षिणतुल्याः ।२६

भरत ऐरावत क्षेत्रोंमेंकालचक्र ] भरतैरावतयो र्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ।२७

षटकाल ]

अन्य क्षेत्रों में कालचक्र ] ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ।२८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



प्रथम और षष्ठम ह्रद से त्रय त्रय नदियों की है उत्पत्ति।
शेष ह्रदों से दो दो नदियों का उद्गम, यह जिनवर उक्ति।।
युगल महानदियों में पहिलीं होती पूरब उदधि विलीन।
शेष महानदियां बहकर पश्चिम समुद्र में होतीं लीन।। २७

चौदह गुणित सहस्र सहायक नदियों का विशाल परिवार।
गंगा सिन्धु आदि युगलों को घेरे बहता कल-कल धार।।
भरत क्षेत्र विस्तार पांचशत छब्बिस योजन मान प्रमाण।
षटभाजित उन्नीस मिलाकर, उत्तर दक्षिण मध्य सुजान।। २८

पर्वत क्षेत्रों का विदेह तक द्विगुण द्विगुण होता विस्तार।
उत्तर के गिरि क्षेत्रों का दक्षिण सम विस्तृत हो आकार।।
भरतैरावत क्षेत्रों में उत्सर्पिणि अरु अवसर्पिणि रूप।
षट कालों में देहादिक का वृद्धि ह्रास-क्र म प्रकृति स्वरूप।। २९

षट कालों में अतिसुखमा, सुखमा, सुखमा-दुखमा यों जान।
दुखमा-सुखमा, दुखमा षष्ठम अति दुखमा, आगम आख्यान।।
आयु ऊँचाई भोग और उपभोग सम्पदा सुख इत्यादि।
उत्सर्पिणि में बढ़ें, घटें अवसर्पिणि में, यह नियम अनादि।। ३०

उत्सर्पिणि में रहे वृद्धिगत कालचक्र, इसके बिपरीत।
अवसर्पिणि में कालप्रवर्तन ह्रासवान होना जगरीति।।
भरतैरावत छोड़ शेष क्षेत्रों में हो नहिं वृद्धि, न ह्रास।
आयु शरीर-प्रमाण आदि का सदा एक सा रहे विकास।। ३१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


क्षेत्रों में आयु ] एक द्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतक हारिवर्षकदैव कुरवकाः ।२९ तथोत्तराः ।३०
विदेहेषु संख्येयकालाः ।३१

भरतक्षेत्र विस्तार ] भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ।३२

धातकी खण्डद्वीप ] द्विर्धातकीखण्डे ।३३

पुष्करार्धद्वीप ] पुष्करार्धे च ।३४

मनुष्यों का वर्णन ] प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ।३५
आर्या म्लेच्छाश्च ।३६

१५ कर्मभूमि ] भरतैरावत विदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ।३७

मनुष्य-त्रियंचों की आयुस्थिति ] नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ।३८

त्रियग्योनिजानां च ।३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



हिमवत हरि सु देवकुरु में आयू क्रमशः इक दो त्रय पल्य।
पुनि हिरण्यवत रम्यक उत्तर कुरु में आयु सु दक्षिण तुल्य।।
रहे विदेहों में सुखमा-दुखमा के अन्त समय का काल।
नर तिरयंच वहां भोगें संख्यात वर्ष की आयु विशाल।। ३२

भरत क्षेत्र विस्तार जम्बु का इक सौ नव्वे वां लघु भाग।
खण्ड धातकी द्वीप जम्बु से द्विगुणित वृद्धि लिये सम्भाग।।
क्षेत्र कुलाचल मेरु नदी नद सब द्विगुणित संख्या को प्राप्त।
खण्ड धातकी में रहते दो जम्बूद्वीप, कहें जिन आप्त।। ३३

पुष्कर द्वीप सु अर्धभाग में जम्बू से द्विगुणित निर्माण।
या कि धातकी खण्ड सदृश ही पुष्करार्ध की रचना मान।।
पूर्व मानुषोत्तर गिरि से जो ढ़ाई द्वीप में करें निवास।
मानव द्विविध कहे आगम में, प्रथम आर्य गुण गण आवास।। ३४

दूजे मानव हों मलेच्छ आचार हीन, समदरश विहीन।
कर्मभूमि वर्णन करते अब उमास्वामि आचार्य प्रवीण।।
असि मसि कृषि वाणिज्य शिल्प विद्या षटकर्मों के आधीन।
यहां जीविका अर्जन होता, पुण्य पाप अर्जन स्वाधीन।। ३५

पांच मेरु के पांच भरत, ऐरावत, देवोत्तर कुरु छोड़।
पांच विदेह मिलाकर होता पन्द्रह कर्मभूमि का जोड़।।
नर भव की उत्कृष्ट आयु त्रय पल्य अधिकतम इनमें जान।
होती है अन्तर्मुहूर्त पर आयु जघन्य कर्म परिमाण।। ३६

त्रियग योनि धारी जीवों की आयु मानवों के समतुल्य।
कवि कहता, दुरलभ नरभव, चारित्र बिना रहता पशुतुल्य।। ३७

इति तृतीयोऽध्यायः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


देव-निकाय ] देवाश्चतुर्णिकायाः ।१

[ प्रमुख समुदाय ) आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ।२

में लेश्या-स्थिति ]

निकायों के अवान्तर भेद ] दशाष्ट पञ्चद्वादश विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ।३

इन्द्र सामानिक त्रासस्त्रिंश पारिषदात्मरक्ष लोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य किल्विषिकाश्चैकशः ।४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


## चतुर्थोऽध्यायः।

देव और कल्पों का वर्णन करता अब चतुर्थ अध्याय।
द्वीपान्तर में विचरण करते रहें चतुर्बिध देव निकाय।।
भवनवासि व्यंतर ज्योतिष्क सु वैमानिक चतुदेव प्रकार।
भवन-त्रिक में कृष्ण नील कापोत पीत लेश्यायें चार।। १

पद्‌म शुक्ल लेश्या मिल षटविध लेश्या होतीं भाव प्रधान।
वृक्ष काट जम्बू फल भक्षण भाव कृष्ण लेश्या पहिचान।।
डाल काट फल भक्षण की रुचि लेश्या नील कही मुनिनाथ।
तोड़ टहनियां फल भक्षण कापोत भावना का ही काज।। २

गुच्छे तोड़ पक्व फल भक्षण लेश्या पीत रूप पहिचान।
वृक्ष डाल झकझोर फलों का भक्षण लेश्या पद्‌म सुनाम।।
स्वयं पतित परिपक्व फलों के आस्वादन का भाव अनूप।
लेश्या शुक्ल कही जिनमत में अति पवित्र भावों का रूप।। ३

उक्त चतुर्विध देवों के दश, अष्ट, पंच अरु द्वादश भेद।
जो कल्पोपपन्न परिसीमित इन्हें न व्याधि, व्यसन, दुख, खेद।।
चतुर्निकाय देव के भेदों में से पुन प्रत्येक प्रकार।
इन्द्रादिक दश भेद अवान्तर रखता निम्न कथन अनुसार।। ४

देवों में स्वामी, आज्ञा-ऐश्वर्य वान कहलाते इन्द्र।
आज्ञा अरु सामर्थ्य रहित भी इन्द्ररूप, सामानिक वृन्द।।
त्रायस्त्रिंश, पुरोहित मंत्री आदि विविध पद-मान निमग्न।
इन्द्र सभा में श्रेष्ठ पारिषद, आत्मरक्ष, रक्षा संलग्न।। ५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


त्रायस्त्रिंश लोकपाल बर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ।५

इन्द्रों की स्थिति ] पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ।६

देवों में कामसुख ] कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ।७

शेषाः स्पर्शरूप शब्दमनः प्रवीचाराः ।८

परेऽप्रवीचाराः ।९

भवनवासी देव-दशविध ] भवनवासिनोऽसुरनाग विद्युतसुपर्णाग्निवातस्त-नितोदधिद्वीप दिक्कुमाराः ।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


लोकपाल, जगपालन धर्मी अरु अनीक सेना के अंग।
रहें प्रकीर्णक, श्रेष्ठ नागरिक, आभियोग सेवा संलग्न।।
देव किल्विषक, अन्तेवासी, सेवावृत्ति परायण जान।
अति ऐश्वर्य विभूषित सबमें श्रेष्ठ, इन्द्र अति महिमावान।।६

व्यंतर अरु ज्योतिष्कों में नहिं लोकपाल अरु त्रायस्त्रिंश।
शेष इन्द्र सामानिक आदिक इन दोनों के होते वंश।।
भवन वासि व्यंतर देवों के सब वर्गों में दो दो इन्द्र।
ज्योतिष्कों में इन्द्र, चन्द्रमा, द्वादश कल्पवासि में इन्द्र।।७

प्रथम और अन्तिम चतु कल्पों में प्रति एक इन्द्र का राज्य।
मध्यवर्ति चतु युगल कल्प में, चार इन्द्र का है साम्राज्य।।
भवनवासि व्यंतर ज्योतिष्क सु प्रथम युगल स्वर्गों के देव।
काय-प्रवीचारी हों, नर सम विषय वासना लिप्त तदैव।।८

शेष स्वर्गवासी संस्पर्शन शब्द, रूप, मन मांहि विचार।
प्रवीचार संतुष्टि लहै इनसे इनके जीवन की धार।।
तीजे चौथे में संस्पर्शन, अष्टम तक रूपादि निहार।
बारह तक मधु-गीत आदि सुन, सोलह तक मन मांहि विचार।।९

इस विध विषय वासना की परितुष्टि लहें ये देव समस्त।
इसके आगे प्रवीचार का दुर्विचार हो जाता ध्वस्त।।
भवनबासि दश विध, कुमार सब, असुर, नाग, विद्युत, सु सुपर्ण।
अग्नि, बात, स्तनित, उदधि पुनि द्वीप, दिक्कुमारों के वर्ण।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


व्यंतर-देव -अष्टविध ]

व्यंतराः किन्नरकिम्पुरुष महोरग गन्धर्व यक्षराक्षस भूतपिशाचाः ।११

ज्योतिष्कदेव पंचविध ]

ज्योतिष्काः सूर्यचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्र प्रकीर्णक तारकाश्च ।१२

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ।१३
तत्कृतः कालविभागः ।१४
वहिरवस्थिताः ।१५

वैमानिक देव ]

बैमानिकाः ।१६
कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ।१७

उपर्युपरि ।१८
सोधर्मैशान सानत्कुमार माहेन्द्र ब्रह्मब्रह्मोत्तर लान्तवकापिष्ठ शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारे-ष्वानत प्राणतयो रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु. विजयवैजयन्त जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौच ।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



क्रीड़ा वेष विनोद आदि में लगते सौम्य और सुकुमार।
भवनों के वासी होना ही भवनवासि संज्ञा आधार।।
विविध देश देशान्तर बासी देव कहाते व्यंतर देव।
रत्नप्रभा खरभाग वसें ये विचरण रुचि वाले स्वयमेव।।११

व्यंतर बसुविध हों किन्नर, किम्पुरुष, महोरग अरु गंधर्व।
राक्षस यक्ष पिशाच भूत, आठों नाना थलवासी सर्व।।
देव ज्योतिषी पांच भांति के, सूर्य, चन्द्रमा, गृह नक्षत्र।
तारागण, ये सभी कान्तिमय तेजपुंज दिखते सर्वत्र।।१२

मर्त्यलोक में मेरु महागिरि की प्रदक्षिणा में नित लीन।
घण्टा घड़ी दिवस रजनी के काल विभाग क्रिया तल्लीन।।
ज्योतिषि देव अवस्थित रहते मर्त्यलोक के बहि सर्वत्र।
वैमानिक की गाथा हित मुनि रचित सूत्र का वर्णन अत्र।।१३

लेते जन्म विमानों में होते विमान इनके आवास।
कल्पज कल्पातीत द्विविध ये, स्वर्ग पंक्ति इनका आवास।।
सोलह कल्प स्वर्ग जन्मे कल्पोपपन्न श्रेणी संप्राप्त।
कल्पातीत श्रेणि के भागी इसके ऊपर, कहते आप्त।।१४

सोलह स्वर्ग, कल्प युग के नव ग्रैवेयिक,अनुदिश नवराशि।
पांच अनुत्तर, देवभूमि ये उपरि उपरि हों स्वर्ग निवास।।
वैमानिक, सौधर्मैशान सनत कुमार और माहेन्द्र।
ब्रह्म, सु ब्रह्मोत्तर, लान्तव कापिष्ठ शुक्र स्वर्गों के इन्द्र।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



वैमानिकों में विशेषता -आधार]

स्थिति प्रभाव सुख द्युति लेश्या विशुद्धीन्द्रियावधि विषयतोऽधिकाः ।२०

गति शरीर परिग्रहाभिमानतो हीनाः ।२१

वैमानिकों में लेश्या-विचार]

पीतपद्मशुक्ल लेश्या द्वित्रिशेषेषु ।२२

कल्प-गणना

प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ।२३

लौकान्तिक देव]

ब्रह्मलोकालयाः लौकान्तिकाः ।२४

सारस्वतादित्य वन्ह्यरुण गर्ततोय तुषिताव्यावाधारिष्टाश्च ।२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


महाशुक्र सु शतार और सहस्रार युग्म के द्वादश स्वर्ग।
आनत, प्राणत, आरुण, अच्युत, सोलह कल्पभूमि के वर्ग।।
नव ग्रैवेयिक ,नव अनुदिश के उपरि विजय, विजयंत, जयन्त।
अपराजित सर्वार्थिसिद्धि में बसते देववृन्द शुभवन्त।।१६

स्थिति प्रभाव सुख द्युति लेश्या की शुद्धि, इन्द्रियों के सुखभोग।
अवधि विषय में ऊपर ऊपर स्वर्गों में उत्कर्ष सुयोग।।
गति शरीर अभिमान परिग्रह के विचार में हो यदि दृष्टि।
उपरि उपरि वैमानिक देवों में सु ह्रास की होती पुष्टि।।१७

प्रथम युगल कल्पों में रहते लेश्या पीत रूप के भाव।
तीजे चौथे स्वर्गों में हो पीत पद्म अनुरूप स्वभाव।।
पंचम.से अष्टम स्वर्गों तक लेश्या पद्म रूप परिणाम।
नवम स्वर्ग से बारहवें तक पद्म शुक्ल लेश्या परिणाम।।१८

तेरह से सोलह स्वर्गों में लेश्या शुक्ल रहे, जिन उक्ति।
ब्रह्मलोक वासी लोकान्तक एक जन्म धरि पावें मुक्ति।।
ग्रैवेयिक अनुदिश अनुतर ग्यारह में परमशुक्ल निजभाव।
ग्रैवेयिक से पूर्व कल्पना इन्द्रादिक की रखे प्रभाव।।१९

सारस्वत, आदित्य बन्हि अरु अरुण गर्दतोयो यशधाम।
तुषित अरिष्ट सु अव्याबाध रहें लोकान्तक के बसु नाम।।
पूर्व चतुर्दश-धारी ये लोकान्तक देव ब्रह्मचारी।
तीर्थंकर-दीक्षा-कल्याणक में अनुशंसा अधिकारी।।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

| | |
|---|---|
| विजयादिक अनुत्तर वैमानिक देव-महिमा | बिजयादिषु द्विचरमाः ।२६ |
| [त्रियंच जीव] | औपपादिक मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ।२७ |
| भवनवासी देवों की आयु] | स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपम त्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः ।२८ |
| वैमानिक देवों में आयु -स्थिति] | सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके ।२९ |
| | सानत्कुमार माहेन्द्रयोः सप्त ।३० |
| | त्रिसप्त नवैकादश त्रयोदश पञ्चदशभिरधिकानि तु ।३१ |
| | आरणाच्युता दूर्ध्वमैकेकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिष्ु सर्वार्थसिद्धौ च ।३२ |
| वैमानिकों की जघन्यायु] | अपरा पल्योपमधिकम् ।३३ |
| | परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा ।३४ |
| नारकों की जधन्यायु | नारकाणां च द्वितीयादिषु ।३५ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



विजयादिक चतु वैमानिक ,अनुदिश वासी या भवदधि तीर।
लें दो नरभव, संयम धर, हों कर्मजयी शिवपुर के वीर।।
दो नरभव पर्याय मध्य इक कल्प जन्म सम्भावित जान।
अरु सर्वार्थसिद्धि स्वामी नरभव धर करते मुक्ति प्रयाण।।२१

उपपादी नारकी देवगण मनुज योनि को छोड़ समस्त।
संसारी तिरयंच कहाते, सर्वलोक व्यापी संत्रस्त।।
देव नारकी जीवों की उत्कृष्ट जघन्य आयु का ज्ञान।
गृद्धपिच्छ मुनिराज कराते रचकर आगे सूत्र वितान।।२२

असुर कुमार आयु इक सागर, नागकुमार आयु इक पल्य।
सुपरण दीप कुमारों की उत्कृष्ट आयु ढ़ाई दो पल्य।।
शेष भवनवासी पा सकते डेढ़ पल्य का आयु वितान।
दो सागर कुछ अधिक आयु उत्कृष्ट लहें सुधरम ईशान।।२३

किंञ्चित अधिक सप्त सागर उत्कृष्ट लहें सानत माहेन्द्र।
इसमें तीन, सात, नव, ग्यारह, तेरह, पन्द्रह जोड़ो वृन्द।।
यों आगे के कल्पयुगों की हो उत्कृष्ट आयु का ज्ञान।
आरणादि सर्वार्थसिद्धि तक इक इक सागर वृद्धि सुजान।।२४

शुचि सर्वार्थसिद्धि के प्राणी भोगें निरत आयु उत्कृष्ट।
जघन्यायु वर्णन अब जैसा सूत्र उमास्वामी उपदिष्ट।।
पहिले स्वर्गयुगल में किंचित अधिक पल्य इक, आयु प्रमाण।
प्रथम पटल उत्कृष्ट आयु दूजे की बने जघन्य सुजान।।२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



दशवर्ष सहस्राणि प्रथमायाम् ।३६

भवनवासियों की जघन्यायु] भवनेषु च ।३७ व्यन्तराणां च ।३८

व्यन्तरों की आयु] परा पल्योपमधिकम् ।३९

ज्योतिष्कों की आयु] ज्योतिष्काणां च ।४०

तदष्टभागोऽपरा ।४१

लौकान्तक देवों की आयु-स्थिति] लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ।४२

इति चतुर्थोऽध्यायः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



आगे आगे के पटलों में यही व्यवस्था होती मान्य।
प्रथम नरक से आगे नरकों में भी यही नियम सामान्य।।
प्रथम नरक में आयु हीनतम दश सहस्र वर्षों की प्राप्त।
भवनवासि व्यंतर देवों में भी यह आयुबन्धं प्रख्यात।। २६

व्यंतर और ज्योतिषी देवों में उत्कृष्ट आयु इक पल्य।
अरु किञ्चित् जोड़ो इसमें, आगम श्रद्धानी बनो निशल्य।।
ज्योतिष्कों की आयु न्यूनतम अष्टम भाग पल्य प्रतिमान।
लोकान्तक देवों की दोनों आयु अष्ट सागर परिमाण।। २७

इति चतुर्थोऽध्यायः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


# अथ पंचमोऽध्यायः

| | |
|---|---|
| अजीव तत्व ] | अजीव काया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ।१ |
| षट द्रव्य ] | द्रव्याणि ।२ |
| | जीवाश्च ।३ |
| द्रव्यों के गुण ] | नित्यावस्थितान्यरूपाणि ।४ |
| | रूपिणः पुद्गला ।५ |
| | आ आकाशादेक द्रव्याणि ।६ |
| | निष्क्रियाणि च ।७ |
| द्रव्यों की प्रदेश संख्या ] | असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैक जीवानाम् ।८ |
| | आकाशस्यानन्ताः ।९ |
| | संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ।१० |
| | नाणोः ।११ |
| द्रव्यों का अवगाह ] | लोकाकाशेऽवगाहः ।१२ |
| | धर्माधर्मयो कृत्स्नें ।१३ |
| | एक प्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ।१४ |
| | असंख्येय भागादिषु जीवानाम् ।१५ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अध्याय ५

धर्म अधर्माकाश और पुद्गल अजीवकाया संज्ञात।
ये हैं द्रव्य असंख्य प्रदेशी, अतः काय संज्ञा सम्प्राप्त ।।
पर्यायों से प्राप्य या कि पर्यायों को द्रवते, वे द्रव्य।
नाना श्रेणि विभक्त जीव भी द्रव्य नाम से हों ज्ञातव्य ।। १

द्रव्य नित्य, अविनाशि, अवस्थित, संख्या में नहिं वृद्धि न ह्रास।
और अरुपी-रूप हीन, रस आदि न हों द्रव्यों के पास ।।
किन्तु मात्र पुद्गल हैं रूपी, मूर्तिमान रखता आकार।
धर्माधर्माकाश सभी इक इक द्रव्यापेक्षा अनुसार ।। २

अन्तरंग वहिरंग रूप से जो पर्याय-क्षेत्र बदलाव।
कारण रूप "क्रिया" का इन तीनों में होता सदा अभाव ।।
एक जीव, धर्माधर्मों के होते सदा असंख्य प्रदेश।
द्रव्याकाश अनन्त प्रदेशी, शास्वत, यही आप्त उपदेश ।। ३

पुद्गल के हों असंख्यात, संख्यात तथैव अनन्त प्रदेश।
एक प्रदेशी अणु, अविभागी, उसके हों नहिं अन्य प्रदेश ।।
लोकाकाश प्रदेश एक में पुद्गल पिण्ड लहें आवास।
यों द्रव्यों को अवगाहन देने में सक्षम लोकाकाश ।। ४

तिल में रमे तैल सम, धर्माधर्म व्याप्त सब लोकाकाश।
लोकाकाश प्रदेश एक ले असंख्यात तक पुद्गल वास ।।
लोकाकाश असंख्य भाग आदिक में जीव लहें अवगाह।
निश्चयतः स्वप्रतिष्ठ द्रव्य सव, लें आकाश मांहि अवगाह ।। ५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



प्रदेश संहार विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ।१६

धर्म, अधर्म द्रव्यों की उपयोगिता ] गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ।१७

आकाश द्रव्य-उप. ] आकाशस्यावगाहः ।१८

पुद्‌गल द्रव्य-उप. ] शरीर वाङ्मनः प्राणापानाः पुद्‌गलानाम् ।१९

सुख दुखं जीवित मरणोपग्रहाश्च ।२०

जीव द्रव्य की उप. ] परस्परोपग्रहो जीवानाम् ।२१

कालद्रव्य-उप. वर्तना परिणामक्रियाः परत्वापरत्वे च कालस्य ।२२

पुद्‌गल द्रव्य ] स्पर्शरस गन्ध वर्णवन्तः पुद्‌गलाः ।२३

पुद्‌गल-पर्यायें ] शब्द बन्ध सौक्ष्म्य स्थौल्य संस्थान भेदतमश्छायातपोद्योतवन्तश्च ।२४

पुद्‌गल-भेद ] अणवः स्कन्धाश्च ।२५

स्कन्ध-उत्पत्ति ] भेद संहातेभ्य उत्पद्यन्ते ।२६

अणु-उत्पत्ति ] भेदादणुः ।२७

भेद संघाताभ्यां चाक्षुषः ।२८

द्रव्य लक्षण ] सद्द्रव्य लक्षणम् ।२९

सत की व्याख्या ] उत्पादव्यय ध्रौव्ययुक्तं सत् ।३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


दीपकवत प्रदेश के संकोची विस्तार गुणों से युक्त।
जीव धार कर्मानुसार तन लोकाकाश वसैं अनुरक्त।।
गमनोद्यत जीवों के चलने में उपकार धर्म का कार्य।
स्थिति शीलों की स्थिति-उपकार अधर्म करे अनिवार्य।।६

द्रव्यों को अवगाहदान आकाश द्रव्य का ही उपकार।
मन बच तन स्वासोच्छवास अरु प्राण रहें पुद्गल आभार।।
सुख दुख जीवन मरण आदि में पुद्गल सदा सहायी जान।
एक दूसरे की सहायता जीव द्रव्य की प्रकृति महान।।७

बर्तना सु परिणाम, क्रिया, अपरत्व, परत्व आदि अनुरूप।
काल द्रव्य की ही सहायता के जानों ये नाना रूप।।
संस्पर्शन, रस, गंध, वर्ण गुण गण से नित पुद्गल भरपूर।
अष्ट, पंच, द्वय, पंच भेद क्रमशः हों गुण पुद्गल के भूर।।८

शब्द, बंध, सूक्ष्मता तथा स्थूलपना संस्थान सुभेद।
तम, छाया, आतपोद्योत, दश पुद्गल के पर्याय प्रभेद।।
पुद्गल का परिणमन सदा हो अणु अथवा स्कन्ध स्वरूप।
भेद भेद खण्डन से हो अणु, पुनि स्कन्ध मिलन का रूप।।९

पिण्ड स्कन्धों का विभाग दे चरम रूप अणु का आयाम।
पुनि चाक्षुष स्कन्ध, भेद-संघात क्रियाओं का परिणाम।।
जिसका हो न विनाश, सदा सत्ता में रहे, वही है द्रव्य।
ध्रुव, उत्पाद और व्यय लक्षणवान सदा सत् है ज्ञातव्य।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| नित्यत्व की व्याख्या ] | तद्भावाव्ययं नित्यम् ।३१ |
| व्याख्या-सिद्धि का प्रकार ] | अर्पितानर्पित सिद्धेः ।३२ |
| पुद्गल-बन्ध ] | स्निग्ध रुक्षत्वाद् बन्धः ।३३ |
| बन्ध के नियम ] | न जघन्य गुणानाम ।३४ |
| | गुणसाम्ये सदृशानाम् ।३५ |
| | द्व्यधिकादि गुणानां तु ।३६ |
| | बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ।३७ |
| द्रव्य लक्षण -प्रकारान्तर से ] | गुणपर्ययवद् द्रव्यम् ।३८ |
| कालद्रव्य | कालश्य ।३९ |
| | सोऽनन्त समयः ।४० |
| गुण की पहिचान ] | द्रव्याश्रया निर्गुणाः गुणाः ।४१ |
| परिणाम-स्वरूप ] | तद्भावः परिणामः ।४२ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


द्रव्यों का तत्पना न छूटे, अव्यय रहे, वही हो नित्य।
मुख्य गौण, अर्पित सु अनर्पित कथन सदा प्रकटाता सत्य।।
मुख्य धर्म का जब हो वर्णन, गौण धर्म तव रहे अकथ्य।
एक द्रव्य में उत्पादी, व्यय, ध्रुव गुण का संगम चिर सत्य।।११

गुण-स्निग्ध वाले अणु मिलकर रुक्ष कणों से करते बन्ध।
पर जघन्य गुण वाले अणुओं का न परस्पर हो सम्बन्ध।।
गुण समानता होने पर सदृश परमाणु न पाते बंध।
विषम गुण-स्थिति, सदृश-भिन्न में नहीं रखे बन्धनं प्रतिबंध।।१२

बन्ध तभी सम्भव होता जव दोगुण अधिक धरै, इक पक्ष।
अधिकगुणी अणु, अल्पगुणी को आत्मसात करने में दक्ष।।
शास्वत गुण स्वामी होकर - पर्यायों का क्र मशः बदलाव। —
जिसके गुण न डिगा पावें, वह द्रव्य निरन्तर अडिग स्वभाव।।१३

समय प्रवर्तक कालचक्र, उत्पाद ध्रौव्य व्यय धरै स्वरूप।
अतः द्रव्य संज्ञा मण्डित वह धरै अनन्त समय प्रतिरूप।।
बर्तमान नित एक समय का अरु अतीत के समय अनन्त।
और अनागत के अनन्त, यों काल द्रव्य के समय अनन्त।।१४

नित द्रव्याश्रित, वाह्य गुणों से निर-आश्रित, गुण की पहिचान।
द्रव्य धरैं तद्भाव रूप परिणाम, वही पर्याय पिछान।।
इक प्रदेश से दूजे तक जो मन्दगती से ले अणु काल।
एक समय उसको कहते जिन, काल प्रहारी धर्म विशाल।।१५

सोते बैठे चलत फिरत, जब प्राण हरण करते यमराज।
धर्म अहिंसा भावमयी संस्कार मात्र तव दें सुखसाज।।१६

इति पंचमोऽध्यायः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| आस्रवतत्त्व | |
| कर्मास्रव हेतुक योग | कायवाङ्मनः कर्मयोगः ।१ |
| | स आस्रवः ।२ |
| शुभाशुभ योग- | शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ।३ |
| आस्रव-भेद- | सकषायाकषाययोः सांपरायिकेर्यापथयोः ।४ |
| साम्परायिक आस्रव (३९ भेद) | इन्द्रिय कषायाव्रत क्रियाः पञ्चचतुः पञ्चपञ्चविशंति संख्याः पूर्वस्य भेदाः ।५ |
| (पच्चीस क्रियायें आस्रव-कारण) | |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



## षष्ठोऽध्यायः

### आस्रव तत्व

कायबचन मनक्रिया रूप हलचल पाते जीवात्म प्रदेश।
योग नाम से ख्यात वही आस्रव का बने निमित्त विशेष।।
शुभ योगों से हो पुण्यास्रव, अशुभ योग पापास्रव रूप।
और साम्परायिक आस्रव भव कारण हो कषाय अनुरूप।। १

ईर्यापथ आस्रव कषाय विन, योग-स्थिति अनुभाग विहीन।
गुणस्थान ग्यारह से आगे तक हो यह कषाय मल क्षीण।।
इन्द्रिय पांच, कषाय चार, अरु व्रताभाव भी पंच प्रकार।
निम्नांकित पच्चीस क्रियाओं वश खुलते कर्मास्रव द्वार।। २

ये सम्यक्त्व क्रिया, मिथ्यात्व, प्रयोग, समादानी व्यवहार्य।
ईर्यापथ, प्रादोषिक, कायिक, आधिकरण, परितापिक कार्य।।
अरु प्राणातिपातिकी, दर्शन, संस्पर्शन, प्रात्ययिकी रूप।
पुनि समन्त-अनुपात, अनाभोगी, स्वहस्त, निःसर्ग स्वरूप।। ३

क्रिया विदारण, आज्ञा-व्यापादिकी, अनाकांक्षा, प्रारम्भ।
पारिग्रहिकी, माया, मिथ्यादरश, अप्रत्याख्यान कुदम्भ।।
देवशास्त्र गुरु बन्दन से सम्यक्त्व वर्धि परिणति सम्यक्त्व।
कुगुरु कुदेव कुधर्म अर्चना रूप क्रिया होती मिथ्यात्व।।४

गमनागमन प्रवृत्ति रूप, आचरण कहाती क्रियाप्रयोग।
समादान में व्रती जीव का संयम विमुख असंयम योग।।
ईर्यागमन निमित्त भूत जो क्रिया उसे ईर्यापथ जान।
क्रोधादिक कषाय अनुरंजित वृत्ति क्रिया प्रादोषिक मान।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


६५

२५क्रियायें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


दुष्टाचरण, हनन, कटुभाषण होती क्रिया कायिकी वृत्ति।
आधिकरण की क्रिया जहां हिंसादि उपकरण लाभ प्रवृत्ति।।
पारितापिकी जीवों को परिताप प्रदाता खोटे काम।
काय प्राण के घात रूप प्राणातिपातिकी का आयाम।।६

दर्शनक्रिया रागवश मनहर रूप निरखने का बहुचाव।
विषय-वस्तु-संस्पर्शन की लालसा क्रिया संस्पर्शन भाव।।
प्रात्यायिकी वश तीक्ष्ण आधुनिक शस्त्रों का हो आविष्कार।
पुनि समन्त अनुपात क्रिया में तजकर हेयाहेय विचार।।७

नर नारी पशु सेवित भू पर मल मूत्रादिक का परित्याग।
अनाभोग में विन देखी शोधी भू पर आसन अनुराग।।
औरों के करणीय कार्य को स्वयं निभाना क्रिया स्वहस्त।
पापाचार वृत्ति अनुमोदन पुनि निसर्ग में लगे प्रशस्त।।८

क्रिया विदारण, पर के पापाचरण प्रचारित करना व्यर्थ।
आज्ञा व्यापादिकी क्रिया में आवश्यक पालन असमर्थ-
होकर के मिथ्योपदेश करता, चारित्र मोहवश जीव।
क्रिया अनाकांक्षा, निर-आदर आगमोक्त विधि हेतु अतीव।।९

छेदनादि में निज प्रवृत्ति अथवा अनुमोदन है आरम्भ।
परिग्रह के संचय प्रबन्ध पारिग्रहिकी का रखते दम्भ।।
माया क्रिया,ज्ञानवर्धन आदिक में कपटपूर्ण व्यवहार।
मिथ्याचरण, प्रशंसा-पूरक मिथ्यादर्शन क्रिया निहार।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आस्रव में तीव्रता, मंदता के हेतु ]

तीव्र मन्द ज्ञाताज्ञात भावाधिकरणवीर्य विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ।६

आस्रव-आधार ]

अधिकरणं जीवाजीवाः ।७

[ जीवाधिकरण १०८ ]

आद्यं संरभ्य समारम्भ योगकृत कारितानुमतकषाय विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ।८

[ अजीवाधिकरण ११ ]

निर्वर्तनानिक्षेप संयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ।९

[ निर्वर्तना (द्विविध) ]

[ निक्षेप-चार ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



अशुभ कर्मवश त्यागवृत्ति का गहन अभाव, अप्रत्याख्यान।
ये कषाय के मूल, साम्परायिक आस्रव के हेतु प्रधान।।
तीव्र मन्द अज्ञात ज्ञात निज भाव, अधिकरण या आधार।
वीर्य-शक्ति सामर्थ्य कराते आस्रव में वैशिष्ठ्य विचार।।११

आस्रव के आधार-अधिकरण होते जीव और निर्जीव।
जीव-अधिकरण एक शताधिक अष्टभेद मय रहें सदीव।।
समारम्भ समरम्भ और आरम्भ रूप मन बच तन योग।
कृत कारित अनुमोदन रंजित क्रोध मान माया अरु लोभ।।१२

त्रय त्रय त्रय चतु गुणित, एक सौ आठ जीव-अधिकरण सु वेष।
अव अजीव अधिकरण दशा से है कर्मास्रव का उपदेश।।
निर्वर्तता द्विविध, निक्षेप चतुर्विध, अरु दो विध संयोग।
त्रिविध-निसर्ग मिलाकर हों, ग्यारह अजीव अधिकरण प्रयोग।।१३

यों जो मूर्त पदार्थ जीव के आकार के उपयोग सकाम।
कर्मबन्ध का बनते कारण, लहें अजीव अधिकरण नाम।।
जो शरीर मन बचन काय स्वासोच्छवास की रचना तूल-
अंतरंग साधन स्वरूप बन कर्मबन्ध की होती मूल।।१४

वही मूलगुण निर्वर्तन अधिकरण नाम से होती ख्यात।
चित्रकर्म बहिरंग हेतु से उत्तर गुण निर्वर्तन ख्यात।।
निक्षेपों में अप्रत्यवेक्षित नाम कहा पहिला निक्षेप।
विन शोधी भू पर पदार्थ का निक्षेपण प्रमाद-अनु लेप।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


[संयोग-द्विविध]

[निसर्ग त्रिविध]

ज्ञानावरण-दर्शनावरण
कर्मास्रव

ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मों के आस्त्व मूल] तत्प्रदोष निन्हव मात्सर्यान्तरायासादनोपाघाता ज्ञान दर्शनावरणयोः।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

 CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri 

दुष्प्रमत्त निक्षेप प्रमार्जन विना बस्तु निक्षेपण योग।
सहसा निक्षेपाधिकरण में बस्तु पटकने का दुर्योग।।

विना प्रयोजन ही पदार्थ का यत्र तत्र रखने का कार्य।
अनाभोग निक्षेप नाम इसको देते ज्ञानी आचार्य।।१६

जल अन्नादि भोज्य सम्मिश्रण होता भक्तपान संयोग।
पीछी पात्र कमण्डल आदिक का आपस में करना योग-
जो कि शुभाशुभ भाव रूप से होवे कर्मबन्ध का मूल,
उसे कहें संयोग उपकरण, अशुभ वृत्ति के जो अनुकूल।।१७

काय बचन मन की प्रवृत्ति मय त्रिविध कहा अधिकरण निसर्ग।
ये अजीव आधारित ग्यारह क्रिया रोकती पथ अपवर्ग।।
दर्शन ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का वर्णन प्रारम्भ।
इन कर्मों के मूलनाश से मोक्षमार्ग होता आरम्भ।।१८

दर्शन ज्ञान विषय में आसादन, प्रदोष, निन्हव, मात्सर्य।
अन्तराय, उपघात, ज्ञान दर्शनावरण कर्मास्रव कार्य।।
दर्शन ज्ञान तत्वचर्चा में ईर्ष्या अरुचि स्वरूप प्रदोष।
ज्ञानवान हो ज्ञान छुपाना कहलाता है निन्हव दोष।।१९

शास्त्रज्ञान, ईर्षावश, औरों को न बताना है मात्सर्य।
पर ज्ञानोपयोग में बाधा अन्तराय कहते गुणवर्य्य।।
पर के तत्वज्ञान प्रवचन का प्रतिखण्डन आसादन रूप।
पर के बिशद ज्ञान में अवगुण-दृष्टि वने उपघात स्वरूप।।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| वेदनीय-कर्म आस्रव ] (असाता वेदनीय) | दुःखशोक तापाक्रन्दन बधपरिदेवना न्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ।११ |
| साता वेदनीय कर्मास्रव ] | भूतव्रत्यनुकम्पादान सरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ।१२ |
| दर्शन-मोहनीय कर्मास्रव | केवलि श्रुतसंघ धर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ।१३ |
| चरित्र-मोहनीय कर्मास्रव ] | कषायोदयान्तीव्र परिणामश्चारित्रमोहस्य ।१४ |
| नरकायु आस्रव ] | बह्वारम्भ परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ।१५ |
| त्रियंच आयु आस्रव ] | माया तैर्यग्योनस्य ।१६ |
| मनुष्य आयु आस्रव ] | अल्पारम्भ परिग्रहत्वं मानुषस्य । स्वभावमार्दवं च ।१८ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


कहें असाता वेदनीय कर्मास्रव कारण अव आचार्य।
दुःख, शोक, तापाक्रन्दन, बध, परिवेदन, ये षटविध कार्य।।
निज, पर अथवा दोनों से जुड़ परिणामों में करें विकार।
बने असाता वेदनीय कर्मों के आस्रव के आधार।।२१

भूतव्रती अनुकम्पा दानम अरु सराग संयम, त्रययोग।
शान्ति, संयमासंयम, शौच, अकाम निर्जरा के संयोग।।
अर्हद्भक्ति, बालतप, वैय्यावृत्ति आदि शुभ कर्म प्रशस्त।
साता वेदनीय कर्मास्रव कारण होते कर्म समस्त।।२२

केवल ज्ञानी, श्रुत, रत्नत्रय भूषित, मुनिगण का परिसंघ।
धर्म अहिंसा, जिनवर में दोषों को गढ़ने का दुःप्रसंग।।
केवलि को कवलाहारी, नारी को मोक्ष, वताना आदि।
कहते इसे अवर्णवाद, इससे भव बन्धन बंधै अनादि।।२३

ये सब दर्शन मोह कर्म के आस्रव के कारण निशदीश।
आगे चरित मोह कर्मास्रव वर्णन यथा किया गुणधीष।।
चतु कषाय अनुरंजित परिणामों में व्याप्त तीव्रता खोट।
चरित मोह कर्मास्रव कारण, आत्मभाव पर करते चोट।।२४

बहु आरम्भ परिग्रह लिप्सा नरक आयु आस्रव के हेतु।
मायाचार प्रपंच कुटिलता त्रियक आयु कर्मास्रव सेतु।।
अल्पारम्भ परिग्रह सीमित मृदु पुनीत मानसिक विचार।
मनुज योनि का आस्रव बन उपजाते हेयाहेय विचार।।२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| | निःशलिव्रतत्वं च सर्वेषाम् ।१९ |
| देव आयु आस्व] | सराग संयम संयमासंयमाकामनिर्जरा बालतपांसि दैवस्य ।२० |
| | सम्यक्त्वं च ।२१ |
| नाम कर्म आस्व] | योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ।२२ |
| | तद्विपरीतं शुभस्य ।२३ |
| तीर्थंकर नाम कर्म आस्रव (१६ कारण भाव) | दर्शन विशुद्धि विंनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग संवेगौ शक्तितस्त्याग तपसी साधु समाधिर्वैय्यावृत्यकरण मर्हदाचार्य बहुश्रुत प्रवचनभक्ति रावश्यका परिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ।२४ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


सप्तशील अरु पंच व्रतों का जब प्राणी के रहे अभाव।
सभी आयु कर्मास्रव कारण हो सकते हैं कर्म-प्रभाव।।
राग सहित संयम, सु संयमासंयम अरु निर्जरा अकाम।
तप विन ज्ञान-बालतप, ये सब देव आयु आस्रव परिणाम।।२६

सम्यक दर्शन से विशुद्ध प्राणी भी देव आयु के पात्र।
गृद्धपिच्छ मुनि नाम-कर्म आस्रव गाथा अब कहते भ्रात।।
योगों की वक्र ता विसम्वादन - यों जो विपरीत प्रवृत्ति।
अशुभ कर्म नामास्रव कारण, शुभ नामास्रव सम्यक -वृत्ति।।२७

सम्यक दर्शन की विशुद्धि पुनि विनय शीलता के शुभभाव।
शीलव्र तों का निरतिचार पालन, ज्ञानोपयोग का चाव।।
पुनि संवेग, शक्तितस्त्याग, तपस्या एवं साधु समाधि।
वैयावृत्तिकरण, अर्हत की भक्ति, भक्ति आचार्य अगाध।।२८

बहुश्रुत भक्ति, भक्ति प्रवचन में, आवश्यक परिहाणि स्वभाव।
मार्ग प्रभावन अरु प्रवचन वात्सल्य रूप हों षोडस भाव।।
तीर्थंकर शुभनाम कर्म के आस्रव सोलह भाव विचार।
भक्तिभाव से इनका आराधन देता शिव सौख्य अपार।।२९

शंका, आकांक्षा, विचिकित्सा अरु अमूढ दृष्टी तज दोष।
उपगूहन, थितिकरण और वात्सल्य प्रभावना सु-गुणकोष।।
इन आठों अंगों के पोषण युत जो सुदृढ तत्व-श्रद्धान।
सम्यक दर्शन शुद्धिभावना कहें उसे मुनिराज महान।।३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| नीच गोत्र कर्मआस्त्रव ] | परात्मनिन्दा प्रशंसे सदसद्‌गुणोच्छादनोद्‌भावने च नीचैगोत्रस्य ।२५ |
| उच्च गोत्र कर्मास्त्रव ] | तद्विपर्ययो नीचैवृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।२६ |
| अन्तराय-कर्मास्त्रव ] | विघ्नकरण मन्तरायस्य ।२७ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


देवशास्त्र गुरु के आदर में नम्र भावना, विनय विचार।
सप्तशील अरु पांच व्रतों का परिपालन हो निरतीचार।।
जो विमुक्ति पथ दरशावै, उस शुद्ध ज्ञान का अर्जन चाव।
जगत काय की नश्वरता का ध्यान बने, संवेग स्वभाव।। ३१

शक्ति और श्रद्धापूर्वक जो औषधि शास्त्र अभय आहार।
सत्पात्रों को दान, त्याग, फलता, बट बीज वृक्ष आकार।।
साधुसमाधि-मुनीश्वर जन तप बाधा का करना परिहार।
वैय्यावृत्तिकरण मुनिगण गुरुजन सेवा सुश्रूषा सार।। ३२

अर्हदभक्ति आप्त में श्रद्धा अरु आचार्यभक्ति निस्वार्थ।
वहुश्रुत भक्तिउपाध्यायों की सेवा सुश्रूषा परमार्थ।।
प्रवचन भक्ति जिनेन्द्र दिव्य उपदेशों में श्रद्धा सम्मान।
आवश्यक परिहाणि भाव, षट आवश्यक परिपालन ध्यान।। ३३

जिन शासन माहात्म्य प्रबर्धक अनुष्ठान रथयात्रा आदि-
मार्ग-प्रभावन अंग कहाता सुख समृद्धि का मूल अनादि।।
प्रवचन वत्सलत्व धर्मीसंग गौ बछड़े सा स्नेह अपार।
तीर्थंकर पददाता षोडस कारण भाव करें भवपार।। ३४
परनिन्दा अरु आत्मप्रशंसा पर गुण आच्छादन का ध्यान।
निज के असद्गुणों की गाथा अधम गोत्र आस्रव आह्वान।।

अपनी आलोचना, प्रशंसा पर की, पर गुण गण आख्यान।
मदाभाव, नित नम्रवृत्ति, शुभ गोत्र कर्म के हेतु महान।। ३५
दान लाभ भोगोपभोग, बीर्यादि कर्म में विघ्न स्वरूप।
खोटे कर्म कहे जाते हैं, अन्तराय आस्रव के रूप।। ३६

इति षष्ठोऽध्यायः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


## शुभ कर्म-आस्रव

| | |
|---|---|
| | हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।१ |
| व्रत-स्वरूप ] | |
| अणुव्रत-महाव्रत ] | देश सर्वतोऽणुमहती ।२ |
| व्रत-पोषक भावना ] | तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ।३ |
| अहिंसा व्रत भावनायें ] | बाङ्मनोगुप्तीर्यादान निक्षेपणसमित्यालोकित पान-भोजनानि पञ्च ।४ |
| सत्यव्रत भावनायें ] | क्रोधलोभभीरुत्व हास्य प्रत्याख्यानान्यनुवीचि भाषणं च पञ्च ।५ |
| अचौर्य व्रतं भावनायें ] | शून्यागार विमोचितावास परोपरोधाकरण भैक्षशुद्धिसधर्माविसंवादाः पञ्च ।६ |
| ब्रह्मचर्य व्रत भावनायें ] | स्त्रीरागकथा श्रवण तन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरण वृष्येष्ट रस स्वशरीर संस्कार त्यागाः पञ्च ।७ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


## सप्तमोऽध्यायः

हिंसाऽनृत स्तेय अवृह्म परिग्रह-त्याग हुये व्रत पांच।
सर्वदेश परित्याग महाव्रत एकदेश मय अणुव्रत जांच।।
पंच व्रतों के दृढ़ीकरण हित पांच पांच भावना प्रधान।
परम अहिंसा व्रत परिपोषक यही भावना, लो पहिचान।। १

बचन गुप्ति, शुभ मनोगुप्ति अरु ईर्या समिति रूप प्रस्थान।
शास्त्रादिक व्यवहरण विनययुत होता निक्षेपण आदान।।
आलोकित भोजन-सु-पान में शुद्ध सरल नियमित आहार।
पंचभावना परम अहिंसा व्रत को देतीं दृढ़ आधार।। २

क्रोध-दमन अरु लोभ-क्षरण भीरुत्व हास्यपन का परित्याग।
हितमित प्रिय बचनामृत-मय अनुवीचि बचन में अविरल राग।।
ये पांचों ही भाव सत्यव्रत परिरक्षण हित अतुल निदान।
काली कोयल मधुर गान से आकर्षित करती जन ध्यान।। ३

शून्यागार प्रवास, विमोचित ठौर मांहि करना आवास।
भिक्षा शुद्धि, इष्ट भू पर न परोपरोध का भाव प्रकाश।।
शास्त्रादिक में स्व पर भाव तजि साधर्मी संग अविसंवाद।
पंच भावना ये अचौर्यव्रत पोषक, सुखवर्धक अविवाद।।४

नारी राग कथा सुनना, मनहर अंगों पर दृष्टि बिंतान।
पूर्व भुक्त भोगों का चिन्तन, कामप्रवर्धक रस का पान।।
निज-शरीर संस्कार-त्याग इन पांचों का करते मतिमान।
ब्रह्मचर्य व्रत पोषक ये भावना करें जीवन कल्याण।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



परिग्रह त्याग व्रत भावनायें ] मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषय राग द्वेषवर्जनानि पञ्च ।८

पाप से विनाश ] हिंसादिष्विहा मुत्रापायावद्यदर्शनम् ।९

दुःखमेव वा ।१०

व्रती जीव के सरल सौम्यभाव ] मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थानि च सत्व गुणाधिक क्लिश्यमानाविनयेषु ।११

जगत्काय स्वभावौ वा संवेग वैराग्यार्थम् ।१२

हिंसा-पाप स्वरूप ] प्रमत्तयोगा त्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ।१३

असत्य-पाप ] असदभिधानमनृतम् ।१४

चोरी-पाप ] अदत्तादानं स्तेयम् ।१५

कुशलि-पाप ] मैथुनमब्रह्म ।१६

परिग्रह-पाप ] मूर्च्छा परिग्रहः ।१७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


पंचेन्द्रिय के प्रिय विषयों में राग भावना का परित्याग।
अप्रिय इन्द्रिय विषयों के प्रति द्वेष भावना जावे भाग।।
परिग्रह त्यागव्रती को सम्बल देतीं उक्त भावना पांच।
पापाचार नशाते इह-पर-लोक, कथन यह मानों सांच।।६

हिंसा दिक में परिणति इह भव अरु परभव को करती नष्ट।
पाप-प्रवर्धक, निन्द्य, अहितकर दुखदायी अरु घातक इष्ट।।
मैत्रीभाव जगत जीवों में, दीन दुखी पर करुणा भाव।
गुणी जनों में हर्षभाव, दुरजन के प्रति मध्यस्थ स्वभाव।।७

कर इनका अभ्यास व्रतीजन, शुद्धवृत्तिमय रखते भाव।
पुन विराग संवेग जगावे जगत-काय-चिन्तन का स्राव।।
पापों के लक्षण स्वरूप का वर्णन अब करते मुनि राज।
पाप त्याग अरु पुण्य काज से होता सुखमय सकल समाज।।८

बिना विवेक ,प्रमादभाव से द्रव्य भाव प्राणों की हानि।
हिंसा पाप कहा जग में, हिंसा ही सब पापों की खान।।
मिथ्या-असद-वचन प्रमादवश, पाप असत्य कहा जिनदेव।
विन दी वस्तु गृहण करना ही चोरी पाप हुआ स्वयमेव।।९

नर-नारी की ब्रह्म भाव बिन रागभाव रंजित आसक्ति।
मिथ्याचरण पाप होता अब्रह्म, यही जिन दरशन उक्ति।।
धन धान्यादिक वाह्य संग अंतः कोधादि कषाय लगाव।
पर पदार्थ अपनत्व भावना मूर्च्छा परिग्रह पाप दुराव।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


निःशल्य व्रत का प्रभाव] निःशल्यो व्रती ।१८

व्रती-श्रावक] अगार्यनगारश्च ।१९

ग्रहस्थों के १२ अणुव्रत] अणुव्रतोऽगारी ।२०

दिग्देशानर्थदण्डविरति सामायिक प्रोषधोपवासोपभोग परिभोगपरिमाणातिथि संविभाग व्रत संपन्नश्च ।२१

द्विग्व्रत (गुणव्रत)
देशव्रत (गुणव्रत)
अनर्थदण्ड विरतिव्रत (गुणव्रत)]

सामयिकशिक्षाव्रत]

प्रोषघोपवास शिक्षाव्रत]

भोगोपभोग परिमाण शिक्षाव्रत]

अतिथि संविभाग शिक्षाव्रत]

गृहस्थ का सल्लेखना व्रत] मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ।२२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

 CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


हो निशल्य व्रत के पालन से व्रती करें कर्मों को नष्ट।
त्रिविध शल्य, माया मिथ्यात्व निदान रूप देतीं बहुकष्ट।।
व्रती जीव हों दो प्रकार के, गृहवासी ग्रहत्यागि महान।
एक देश व्रतधारी, शिवपथ-पथिक ग्रहस्थाश्रम प्रतिमान।।११

ऐसे श्रावक पांच अणूव्रत, त्रयगुणव्रत, शिक्षाव्रत चार।
यों वारह व्रतधारी होकर, तजते मन के कलुष विकार।।
दशों दिशाओं की सीमाकर भ्रमण करें दिग्व्रती सदैव।
देश नगर अटवी सीमावंध देशव्रती जन चलैं तथैव।।
बिरति अनर्थ दण्ड व्रतधारी पापभीरु, कुछ करें न व्यर्थ।
तीन रूप गुणव्रत पालन से होता कभी न कार्य अनर्थ।।१२

सामायिक शिक्षाव्रत धारी मन वच काय प्रवृत्ति निवृत्त।
समता भाव रमें, अविरत, निज गुण चिन्तन में रहें प्रवृत्त।।
सामायिक में निरारम्भ जन सभी परिग्रह से अतिदूर।
साधु दिगम्बर सम उज्वल भावों से हों गेही भरपूर।।१३

प्रोषधोपवासी श्रावक करते एकाशन मय उपवास।
आत्मशुद्धि में लीन रहें नित, पाप कषायों का कर ह्रास।।
संयत हो भोगोपभोग परिमाण व्रती रहते संतुष्ट।
और अतिथि संविभाग वाले सेवा धर्म करें परिपुष्ट।।१४
मुनिजन को आहार कमण्डलु पिछी बसतिका का कर दान।
धन्य मानते मनुज योनि को, निज पर का करते कल्याण।।

मृत्युकाल में व्रती सु सल्लेखना साधकर तजते प्राण।
उभय लोक सुख आकांक्षा विन काय कषाय करें कृश जान।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



सम्यग्दर्शन के अतीचार] शंङ्काङ्क्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसा संस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ।२३

व्रतों के अतीचार] व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ।२४

अहिंसा अणु व्रत के ५ अतीचार] बन्धवधच्छेदातिभारारोहणान्नपान निरोधाः ।२५

सत्य अणु व्रत के ५ अतीचार] मिथ्योपदेश रहोभ्याख्यान कूटलेखक्रिया न्यासापहार-साकार मंत्रभेदाः ।२६

अचौयाणुव्रत के ५ अतीचार] स्तेन प्रयोग तदाहृतादान विरुद्ध राज्यातिक्रम हीनाधिकमानोन्मान प्रतिरूपक व्यवहाराः ।२७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अतीचार सम्यक दर्शन के पांच कहें, शिवपुर के भूप।
शंकाऽकांक्षा विचिकित्सा अरु मिथ्या दृष्टि प्रशंसारूप।।
तत्व ज्ञान विचलित पर की संस्तुति, ये करते व्रत को भंग।
व्रत शीलों के पांच पांच अतिचारों का अब देखो रंग।।१६

जीवों को बन्धन में रखना, बध करना निर्दय बन क्रूर।
स्वारत हित अंगों का छेदन, अनुमोदन से हर्षित भूर।।
निर्दयता से अधिक भार आरोहण, अन्न पान अवरोध।
अतीचार ये पांच अहिंसा व्रत घातक, यों रखना बोध।।१७

मिथ्या-दुर-उपदेश, दूसरों का अपवाद, असद आख्यान।
और रहोभ्याख्यान-अन्य की गूढ़ क्रियायों का प्रकटान।।
कूटलेख, पर के अपुष्ट बचनों का करना विविध प्रचार।
न्यास अपहरण कार्य-धरोहर के ठगने का दुष्ट विचार।।१८

औरों के मन्तव्य जानकर ईर्षावश प्रकटाना व्यर्थ।
मंत्रभेद साकार, पांच ये सत्यव्रती का करें अनर्थ।।
चोरी को प्रेरित करना, अथवा सहमति देने का योग।
औरों से प्रेरणा दिलाना, कहलाता स्तेन प्रयोग।।१९

चोरी के पदार्थ को लेना है स्तेन आहृतादान।
अरु विरुद्ध राज्यातिक्रम में नियमभंग आदान-प्रदान।।
हीनाधिक मानोनमान में मापतौल का गलत प्रयोग।
लेन देन हित न्यूनाधिक मापों का रखना, पुन उपयोग।।२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



| | |
|---|---|
| शकिव्रत के ५ अतीचार | पर विवाहकरणेत्वरिका परिग्रहीता परिग्रहीता गमनानङ्गक्रीड़ा कामतीव्राभिनिवेशाः।२८ |
| परिग्रह परिमाणव्रत के ५ अतीचार] | क्षेत्रवास्तु हिरण्य सुवर्ण धनधान्य दासीदास कुप्य प्रमाणातिक्रमाः।२९ |
| दिग्व्रत गुणव्रत के ५ अतिचार] | ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम क्षेत्रवृद्धि स्मृत्यन्तराधानानि।३० |
| देशव्रत गुणव्रत के अतिचार] | आनयन प्रेष्यप्रयोग शब्द रूपानुपातपुंद्गलक्षेपाः।३१ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



प्रतिरूपक व्यवहार - मिलावट कर पदार्थ विपणन की रीति।
या नकली को कहकर असली, अनुचित धन-अर्जन में प्रीति।।
इन अचौर्य अणुव्रत के पंच अतीचारों का करें बचाव।
ब्रह्मचर्य अणुव्रत भंजक अतिचार कहें मुनि करुणा भाव।।२१

पर विवाह करना, इत्वरिका-कुटिल नारियों से सम्बन्ध।
पतिविहीन, आचरण शिथिल नारी जन से अनुचित सम्बन्ध।।
तीव्र काम अभिलाषा के वश अन्य कार्य में अरुचि, अतोष।
अरु अनंगक्रीड़ा ये पांचों ब्रह्मचर्य व्रत घातक दोष।।२२

क्षेत्र बास्तु परिमाण अतिक्रम-सीमा का उल्लंघन योग।
पुनि हिरण्य स्वर्णादि द्रव्य का सीमातीन उपार्जन रोग।।
धन धान्यादि दास दासी का अति संग्रह कर सीमातीत।
कुप्य प्रमाण अतिक्रम कर वर्तन वस्त्रादिक संग्रह रीति।।२३

नाना मर्यादायें ले पुनि स्वार्थ लोभवश सीमा टूट।
परिग्रह के परिमाण व्रती की मर्यादा को लेते लूट।।
अव गुणव्रत के अतीचार पन कहते ग्रद्ध पिच्छ मुनिराज।
ऊर्ध्व अधो तिरयक व्यतिक्रम में सीमांत्रय का लंघन काज।।२४

क्षेत्र वृद्धि का भाव तथा मर्यादा विसरि यथेष्ट प्रयाण।
इन पांचों से विरतपना ही निरतिचार दिग्व्रत अघहान।।
देश क्षेत्र सीमा के बाहर से पदार्थ मंगवाना आदि।
अतीचार आनयन देशव्रत की महिमा का घटना बादि।।२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



अनर्थदण्ड गुणव्रत के अतिचार]

कन्दर्पकौत्कुच्य मौखर्या समीक्ष्याधिकरणोपभोग परिभोगानर्थक्यानि ।३२

सामायिक शिक्षाव्रत के अतिचार]

योगदुष्प्रणिधानानादर स्मृत्यनुपस्थानानि ।३३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


देश क्षेत्र की मर्यादा कर उससे बाहर का उपयोग।
भृत्यादिक को प्रेषित करना अतीचार है प्रेष्य प्रयोग।।
पुनि शब्दानुपात में ताली चुटकी आदिक दे संकेत।
मर्यादित भू से बाहर निज कार्य साधना स्वारथ हेतु।।२६

अतीचार रूपानुपात में देशव्रती जन सीमा बिद्ध।
नाना आकृतिरूप दिखा सीमा लंघन कर कारज सिद्धि।।
देश क्षेत्र सीमा से बाहर कंकड़ पत्थर आदिक फेंक।
व्यक्ति बुलाना, अतीचार पुद्‍गल क्षेप के रूप अनेक।।२७

अतीचार ये पांच देशव्रत के दूषण, आस्रव के हेतु।
विरति अनर्थदण्ड व्रत के अतिचार कथन अव है समवेत।।
रागयुक्त परिहास, असद्‍भाषण होता'कन्दर्प' अनर्थ।
अरु कौत्कुच्य अशिष्ट वचनमय कायकुचेष्टा करना व्यर्थ।।२८

पुनि मौखर्य धृष्टता पूर्वक बहुप्रलाप एवं उपहास।
असमीक्षाधिकरण विन कारण व्यर्थ कार्य करना दुख राश।।
पुनि भोगोपभोग से ज्यादह संचय व्यय करना, ये पांच।
विरति अनर्थदण्ड व्रत के अतिचार हरें जीवन का सांच।।२९

सामायिक शिक्षाव्रत के अव अतीचार कहते जिन शास्त्र।
दुष्प्रणिधान काय का सामायिक के समय हिलाना गात्र।।
दुष्प्रणिधान बचन का सामायिक में व्यर्थ बचन गुंजार।
मन का दुष्प्रणिधान मनसि चंचलता, बहु विकल्प आगार।।३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत के ५ अतिचार]

अप्रत्यवेक्षिता प्रमार्जितोत्सर्गादान संस्तरोपक्रमणानादर स्मृत्यनुपस्थानानि।३४

भोगोपभोग परिमाण शिक्षाव्रत अतीचार]

सचित्त सम्बन्ध संमिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः।३५

अतिथिसंविभाग शिक्षाव्रत अतीचार]

सचित्तनिक्षेपापिधान परव्यपदेश मात्सर्यकालातिक्रमाः।३६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


विना श्रद्धा ज्यों त्यों सामायिक कहें अनादर मुनिगण भूप।
स्मृति अनुपस्थान समय पर सामायिक की विस्मृति रूप।।
अतीचार ये सामायिक शिक्षाव्रत का कम करें महत्व।
अव प्रोषध उपवास व्रती के अतीचार का सुनिये तत्व।।३१

बिन प्रतिवेक्षित बिना प्रमार्जित भू पर मलमूत्रादिक त्याग।
बिन प्रतिवेक्षित बिना प्रमार्जित उपकरणादि ग्रहण का राग।।
पुनि संस्तरोपक्र मण, तद्वत वस्त्र चटाई आदि फैलाव।
क्षुधा तृषा वश व्रत पालन में निर उत्साह, अनादर भाव।।३२

स्मृति अनुपस्थान मनसि चंचलता, अस्थिरता व्रतकाल।
प्रोषधोपवासी व्रतधारी का अनिष्ट इनसे विकराल।।
व्रत भोगोपभोग परिमाणी अतीचार करते परिहार।
नहिं लेवें सचित्त भोजन अथवा सचित्त-सम्बन्ध अहार।।३३

नहिं सचित्त सम्मिश्र भोज्य लें, नहिं मदकर अभिषव आहार।
अर्धपक्व, अतिपक्व रूप, दुष्पक्व भोज्य का तजें विचार।।
अतिथि संविभागी व्रत के भी अतीचार हैं पांच प्रकार।
भोज्य वस्तु रखना सचित्त पर है सचित्त निक्षेप विकार।।३४

भोज्य वस्तु का ढंकना पत्रादिक सचित्त से, कार्य विधान।
संयत जन को हो अखाद्य जब, वह होता सचित्त अपिधान।।
पर व्ययदेश स्वयं औरों का द्रव्यदान एवं विपरीत।
दान काल आदर-अभाव, मात्सर्य गुणी में ईषा रीति।।३५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


सल्लेखना व्रत के अतीचार] जीवितमरणा शंसा – मित्रानुराग सुखानुबन्ध निदानानि ।३७

दान-का महत्व] अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ।३८

विधिद्रव्य दातृपात्र विशेषात्तद्विशेषः ।३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


कालातिक्रम दोष समय भोजन का टाल, निमंत्रण दान।
अतिथि संबिभागी व्रतधारी करते अतीचार पहिचान।।
द्वादश अणु, गुण, शिक्षाव्रत के अतिचारों का यह आख्यान।
सुनकर भवि विवेक युत पालें निरतिचार व्रत महिमावान।।३६

जीवन के अंतिम चरणों में क्षीण करें भवि काय कषाय।
सल्लेखना विधिक तन त्यागें, यों विराग पर भव सुखदाय।।
इस व्रत के परिपालन में भी दोष लगाते पांच बिभाव।
वैय्यावृत्ति आदि से हर्षित हो जीवन अभिलाषा चाव।।३७

मरणाशंसा में सेवा की कमी देख मरने की चाह।
अरु मित्रानुराग में मैत्री जनित प्रीति चिन्तन की राह।।
पूर्व भुक्त भोगों का चिन्तन, मनन सुखानुबन्ध अतिचार।
तपश्चरण से भोगाकांक्षा ही निदान दुख का आगार।।३८

जब अज्ञान भूलवश दूषण लगें, उन्हें कहते अतिचार।
जानबूझकर दूषित चर्या, अनाचार का ही आकार।।
पर उपकार हेतु अपने धन धान्य त्याग को कहते दान।
फलता है सत्पात्र दान बट् बीज भाँति बन वृक्ष महान।।३९

विधि विशेषता दाता अरु सत्पात्र श्रेष्ठता के अनुसार।
दान पुण्य वैशिष्ठ्य प्राप्त कर, करता दानी का उद्धार।।४०

इति सप्तमोऽध्याय:

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


बन्ध तत्व

कर्मबन्ध कारण] मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः।१

मिथ्यादर्शन (५)

द्वादश अविरति]

पन्द्रह प्रमाद]

पन्द्रह योग]

कर्मबन्धन का रूप] सकषायत्वा ज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः।२

कर्मबन्ध भेद (४) प्रकृतिस्थित्यनुभव प्रदेशास्तद्विधयः।३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अथ अष्टमोऽध्यायः।

पन (५) मिथ्यादर्शन, द्वादश अविरति, पन्द्रह प्रमाद संयोग।
पन्द्रह योग, कषाय पंचविश, होते कर्मबन्ध के योग।।
मिथ्यादर्शन कर्मोदय नैसर्गिक मिथ्यादर्शन जान।
पर उपदेश निमित्त प्राप्त कर मिथ्या दरश ग्रहीत प्रमाण।।१

मिथ्यादर्शन भेद अवान्तर पन, एकान्त और विपरीत।
संशय अरु वैनयिक रूप, अज्ञान पांच यों करो प्रतीति।।
षट कायिक हिंसा, षट इन्द्रिय विषयों से निवृत्ति के भाव।
जागृत जिससे हो न सकें वह आविरति द्वादश भेद स्वभाव।।२

है प्रमाद कर्त्तव्यों के प्रति अरुचि अनादर भाव स्वरूप।
जो निमित्त भेदों के कारण हो जाता है पन्द्रह रूप।।
इन्द्रिय पांच, कषाय चार, विकथा चतु, निद्रा प्रणय-विचार।
यों प्रमाद पन्द्रह निमित्त से खोले कर्मबन्ध के द्वार।।३

आत्मप्रदेश परिस्पंदन की योग नाम से हो पहिचान।
मन बचकाय योग के चतु चतु सप्तभेद मिल पन्द्रह मान।।
सत्य असत्य उभय अनुभव ये चारों मन बच आश्रित योग।
औदारिक वैक्रियिक तथा आहारक तीन काय-संयोग।।४
तीन काय के मिश्र योग अरु कामर्ण काय योग का योग।
पन्द्रह भेद योगके जो पनपाते कर्मबन्ध का रोग।।

कषै आत्म परिणामों को जो, वह कषाय पच्चीस प्रकार।
नोकषाय नव (९), अरु कषाय सोलह, उपजातीं कष्ट अपार।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri




| | |
|---|---|
| प्रकृतिबन्ध (८ भेद) | आद्यो ज्ञानदर्शनावरण वेदनीय मोहनीयायुर्नाम गोत्रान्तरायाः ।४ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


हो कषाय कलुषित जव प्राणी कर्मरूप पुद्गल परमाणु। —
आत्मसात कर लेता है वह बन्धक्रिया कष्टों की खान।।
प्रकृति, स्थिति, अनुभव, प्रदेश मिल बन्ध कहाते चार प्रकार।
प्रकृति, प्रदेश मुख्यतः योगिक, स्थिति अनुबन्ध कषायाधार।।६

बद्धकर्म के गुण स्वभाव का परिचय दाता प्रकृति सु बन्ध।
बद्धकर्म की मर्याता थिति का द्योतक है स्थिति बन्ध।।
अनुभव बन्ध, बद्ध कर्मों की फल देने की शक्ति-प्रधान।
बद्ध कर्म अणुओं की संख्यात्मक प्रदेशकृत बंध वितान।।७

एक काल में जीव संग जितने कर्माणु बन्ध को प्राप्त।
वह प्रदेश बन्धन कहलाता यही कर्म बन्धन विधि ख्यात।।
ज्ञान दर्शनावरण वेदनी मोहनीय पुनि आयु विशेष।
नाम गोत्र अरु अन्तराय बसु कर्म प्रकृतिबन्धन के वेष।।८

आत्म ज्ञान गुण आच्छादन में कारण ज्ञानावरण सुजान।
दर्शन गुण आवरण रूप, दरशन-आवरण कर्म पहिचान।।
सुख दुख वेदन में निमित्त हो वेदनीय कृत ऊहापोह।
राग, द्वेष, मिथ्या, पदार्थ में निज अधिकार जगाता मोह।।९

आयु कर्म, नर नरकादिक चतुगति धारण में बने निमित्त।
गति अनुरूप देह रचना में नाम कर्म कारण ही शक्त।।
गोत्र कर्म अनुरूप कुलों में जन्म, उच्च नीचादिक भाव।
दान लाभ आदिक में विघ्न करण ही अन्तराय विधि स्राव।।१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri




| | |
|---|---|
| आठ कर्मो के प्रभेद ] | पञ्चनव द्वयष्टाविंशति चतुर्द्विचत्वारिशंद् द्वि पञ्च भेदाः यथाक्रमम् ।५ |
| ५ ज्ञानावरण कर्म ] | मतिश्रुतावधि मनः पर्ययकेवलानाम् ।६ |
| ४ दर्शनावरण कर्म ] | चक्षुरचक्षुरवधि केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा प्रचला-प्रचला प्रचला स्त्यानगृद्धयश्च ।७ |
| २ वेदनीय कर्म ] | सदसद्वेद्ये ।८ |
| मोहनीय कर्म २८ ] | दर्शनचारित्र मोहनीया कषायकषायवेदनीया रव्यास्त्रिद्विनवषोडसभेदाः सम्यक्तवमिथ्यात्व तदुभयान्य कषायकषायौ हास्य रत्यरति शोकभय जुगुप्सा स्त्री पुन्नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्य प्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन विकल्पाश्चैकशः क्रोध मान माया लोभाः। ९ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


इनके क्रमशः पांच नव तथा दो अट्ठाइस चार प्रभेद।
ब्यालिस दो अरु पंच भेद का करते वर्णन अब अनुछेद।।
मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय, केवल ज्ञानों का ज्योति प्रपुंज।
ज्ञानावरण करे आच्छादित, करे जीव मिथ्यामति कुंज।।११

चक्षु अचक्षु, अवधि, केवल दर्शन गुण के आवरण स्वरूप।
निद्रा पुनि निद्रा निद्रा - जिसवश प्रगाढ़ निद्रा बहुरूप।।
प्रचलावश बैठे बैठे ही निद्रा, अरु भारी सिर पैर।
प्रचला-प्रचला में चलते फिरते निद्रा का दिखता वैर।।१२

पुनि स्त्यानगृद्धि वश जन निद्रा में करे शुभाशुभ काम -
जागृत होते हों विस्मृत, नव कर्म दर्शनावरणी नाम।
साता सुखमय और असाता दुखमय, वेदनीय युग भेद।
मोहनीय के अब अट्ठाइस वर्णित होंगे कर्म-प्रभेद।।१३

त्रयविध दरशन मोहनीय, चारित्र मोहनी पच्चिस रूप।
कर्म धातिया मोहनीय इस भाँति धरै अठवीस स्वरूप।।
दरश मोह सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्व और सम्यक मिथ्यात्व।
चरित मोह सकषाय वेदनी अरु अकषाय वेदनी ख्यात।।१४

सोलह भेद कषाय वेदनी, क्रोध मान माया अरु लोभ।
होकर अनन्तानुबन्धी अप्रतिआख्यान रूप, युत क्षोभ।।
प्रत्याख्यान संज्वलन से हो गुणित हुये ये सोलहरूप।
पुनि अकषाय वेदनी नामक नाम कर्म नवभेद स्वरूप।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


| | |
|---|---|
| आयुकर्म (४ भेद) | नारक तैर्यग्योन मानुषदैवानि ।१० |
| नाम कर्म (४२ भेद) | गति जाति शरीरांङ्गोपांङ्ग निर्माण बन्धन संघात संस्थानं संहनन स्पर्श रसगन्ध वर्णानुपूर्व्या गुरुलघूपघात परघातातपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येक शरीर त्रस सुभग सुस्वर शुभ सूक्ष्म पर्याप्तिस्थिरादेय यशः कीर्ति सेतराणि तीर्थ करत्वं च ।११ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



हास्य रति अरति शोक कष्ट भय और जुगुप्सा कृत परिणाम।
स्त्री पुरुष नपुंसक वेद मिलाकर नव (९) होता आयाम।।
क्रोधादिक कषाय कषतीं गुण, करें अमूल्य आत्मनिधि नष्ट।
विष घोले अकषाय वेदनी, प्राणि मात्र का करै अनिष्ट।। १६

जो अनन्त संसार हेतु मिथ्या दरशन अनुविद्ध कषाय।
अनन्तानुबन्धी कषाय उसको कहते ज्ञानी मुनिराय।।
रागद्वेष से विरतपने का भाव अप्रत्याख्यान नशाय।
देशविरत, संयम की जागृति में बाधक यह बने कषाय।। १७

यम संयम परिपूर्ण विरति का भाव न जिस वश जगे अनन्य।
प्रत्याख्यान कषाय सकल चारित्र हनै, जन रहे विपन्न।।
जो नहिं हो बाधक संयम में, करै संज्वलित संयम भाव।
राग द्वेष, संज्वलन दशा में, जल रेखा सम रखें प्रभाव।। १८

यथाख्यात चारित्र स्वच्छता ढक देती संज्वलन कषाय।
चेतन-गुण घाती कषाय नित प्राणी को जग में भटकाय।।
अनन्तानुबन्धी कषाय षटमास अधिक यदि चेतन साथ।
सम्यक दर्शन अरु सम्यक्त्वाचरण चरित घातै बहुभाँति।। १९

नारक त्रियग मनुष्यदेव यों आयु कर्म चतुरूप अनूप।
नाम कर्म के व्यालिस भेदों का मुनिवर अब कहें स्वरूप।।
नरकादिक चतुगति, इन्द्रिय की पांच भांत, पुनि पांच शरीर।
अंगोपांग त्रिविध-औदारिक आहारक वैक्रियिक प्रवीर।। २०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



| | |
|---|---|
| गोत्रकर्म (२ भेद) | उच्चैर्नीचैश्च ।१२ |
| ५ अन्तराय कर्म] | दान लाभ भोगोपभोग वीर्या णाम् ।१३ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


इक निर्माण, पंच बंधन, औदारिक आदि पांच संघात।
षट संस्थान, संहनन षट, स्पर्श आदि की बीस प्रजाति।।
जो शरीरगत शीतादिक स्पर्श आदि बसु औ रस पांच।
गंध द्विविध, श्वेतादि वर्णपन, उक्त प्रकृति विशंति यों जांच।।२१

आनुपूर्व चतु, अगुरुलघू, उपघात और परघातक अंग।
आतपमय, उद्योतरूप, उच्छवासवान काया प्रत्यंग।।
नभ गति हेतुक उभय विहायोगति, प्रत्येक शरीर विचार।
साधारण शरीर-जिसमें बहुजीव धरैं अपना अधिकार।।२२

त्रस, थावर सु सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, शुभ, अशुभ स्वरूप।
सूक्ष्म, थूल, पर्याप्ति सहित, पुन अपर्याप्त, अस्थिर, थिर रूप।।
अनादेय आदेय और यश कीर्तिमान एवम् विपरीत।
तीर्थकरत्व प्रकृतियां व्यालिस नाम कर्म की करें प्रतीति।।२३

उच्च गोत्र अरु नीच गोत्र दो गोत्र कर्म के होते अंग।
ज्ञानादिक में विघ्न परक पन (५) अन्तराय दुख करन प्रसंग।।
दान लब्धि को करे तिरोहित दान-अन्तरायी यह कर्म।
धन भण्डार नशै पर, परहित दान न दे, पावैं नहिं धर्म।।२४

जीव विवश लाभान्तराय वश, देह घिसें नहि पावे लाभ।
भोगाकांक्षा विफल रहे, भोगान्तराय का हो जब दाव।।
उपभोगान्तराय वश प्राणी, साधन कर न सकै उपभोग।
क्षीण करै वीर्यान्तराय पुरुषार्थ परम पद पाने योग्य।। २५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



बन्धन नामकर्म

संघात नामकर्म

संस्थान नाम कर्म ]
समचतरस्र संस्थान ]
न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान ]
स्वाति संस्थान ]

कुब्जक संस्थान ]
वामन संस्थान ]

हुण्डक संस्थान ]

संहनन नाम कर्म ]

वज्रवृषभनाराच संहनन ]

वज्र नाराच संहनन ]

अर्धनाराच संहनन ]

कीलित संहनन ]
असंप्राप्तास्रपाटिका संहनन ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



बन्धन नामकर्म से पुद्गल बंध रचते शरीरं बहुरुप।
उसको ठोस रूप देने में सक्षम हों संघात अनूप।।
आकृति रचना में निमित्त षट भेदवान होता संस्थान।
समचतरस्र शरीराकृति को देता यथायोग्य परिमाण।।२६

बट सम आयत वपु न्यग्रोध-परिमण्डल नाम कर्म की दैन।
अधोभाग आकृति में विस्तृत हो जब, स्वाति कहा जिन वैन।।
आकृति के कुवड़ेपन में होता निमित्त कुब्जक संस्थान।
आकृति का बोनापन ही वामन संस्थान कर्म पहिचान।।२७

जब शरीर के अवयव धारैं रूप विषमता के आकार।
वह हुण्डक संस्थान कर्म का ही माना जाता अपकार।।
जो शरीर के रचनाक्र म में अस्थि संधि का रहे निमित्त।
उसे संहनन कहते मुनिजन, वह षटभेदवान है मित्र।।२८

जब शरीर की वेष्ठन कीलें अस्थि वज्रमय प्रबल अनूप।
वज्र वृषभ नाराच संहनन आश्रित रचना का वह रूप।।
जहां वज्रमय कील अस्थियों से होवे शरीर निर्माण।
वही वज्र नाराच संहनन नाम कर्म का स्पष्ट प्रमाण।।२९

अस्थि वर्ग कीलों से कीलित हो जब वह होता नाराच।
अस्थि अर्धनाराच संहनन में आधीकीलित, यह सांच।।
अस्थि परस्पर जब कीलित हों, कीलित उसे कहें मुनिराज।
वहां असंप्राप्ता स्रपाटिका जहां शिराबन्धन का काज।।३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



| | |
|---|---|
| स्थितिबन्ध ] | आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिशंत्सागरोपमकोटी कोट्यः परा स्थितिः ।१४ |
| | सप्ततिर्मोहनीयस्य ।१५ |
| | विशंति र्नाम गोत्रयोः ।१६ |
| | त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ।१७ |
| | अपरा द्वादश मुहूर्तो वेदनीयस्य ।१८ |
| | नामगोत्रयोरष्टौ ।१९ |
| | शेषाणा मन्तर्मुहूर्ताः ।२० |
| अनुभाग बन्ध ] | विपाकोऽनुभवः ।२१ |
| | स यथानाम ।२२ |
| | ततश्च निर्जरा ।२३ |
| प्रदेशवन्ध ] | नाम प्रत्ययाः सर्वतोयोग विशेषात्सूक्ष्मैक क्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्म प्रदेशेष्वनन्तान्त प्रदेशाः ।२४ |
| पुण्य तथा पाप प्रकृतियां ] | सद्वेद्य शुभायुर्नाम गोत्राणि पुण्यम् ।२५ |
| | अतोऽन्यत्पापम् ।२६ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



विग्रह गति में मरण-पूर्व-पर्याय-रूप जीवात्म प्रदेश
रखता कर्म आनु पूर्वी, चतु गति स्वरूप इसके चतु वे श ।।
अन्य प्रकृतियों की सु परिणमन शक्ति रहे संज्ञा अनुसार ।
अति सुवोध इस हेतु वृथा रचना का नहीं किया विस्तार ।। ३१

ज्ञान दर्शनावरण वेदनी अन्तराय का आयु वितान ।
कोड़ाकोड़ि तीस सागर उत्कृष्ट, जैनदर्शन आख्यान ।।
मोहकर्म की सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर स्थिति उत्कृष्ट ।
नाम कर्म की विंशति कोड़ा कोड़ी सागर थिति निर्दिष्ट ।। ३२

आयु कर्म की तेतिस सागर श्रुत अनुसार थिती उत्कृष्ट ।
वेदनीय की थिति जघन्य द्वादश मुहूर्त ही है निर्दिष्ट ।।
आयु गोत्र कर्मों की अष्ट मुहूर्त जघन्य स्थिती प्रमाण ।
पुन जघन्य अन्तर्मुहूर्त आठों कर्मों की थिति पहिचान ।। ३३

अव अनुभाग बंध वर्णन प्रारम्भ, विपाक उदय अनुभाग ।
कर्म-नाम अनुरूप सदा अनुभाग बंध का करे विभाग ।।
तीव्र मन्द मध्यम फल देकर कर्म निर्जरा को जब प्राप्त ।
पूर्ण फलित हो हों विगलित - सविपाक निर्जरा कहते आप्त ।। ३४

कर्मोदय से पूर्व धर्म जप तप कर कर्म नाश को प्राप्त ।
जीव धरै अविपाक निर्जरा कर्म श्रृंखला होय समाप्त ।।
कर्म प्रकृतिवश सभी भवों में योग विशेष क्रिया अनुसार-
सूक्ष्म एक क्षेत्रावगाह आत्मन के निज प्रदेश परिवार ।। ३५

पुद्गल रूपवान कर्मों के यदा अनन्तानन्त प्रदेश ।
आपस में घुलमिल जाते हैं वह प्रदेश बन्धन का वेश ।।
साता वेदनीय शुभ आयु सु नाम गोत्र शुभ प्रकृति प्रशस्त ।
इनसे भिन्न कर्म होते हैं पाप प्रकृति प्रतिमान समस्त ।। ३६

इति अष्टमोऽध्यायः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





## संवर तथा निर्जरा तत्व का वर्णन

संवर का स्वरूप ] आस्रव निरोधः संवरः ।१

संवर के उपाय ] स गुप्तिसमिति धर्मानुप्रेक्षापरीषहजय चारित्रैः ।२

तपसा निर्जरा च ।३

त्रयगुप्तिं ] सम्यग्योग निग्रहो गुप्तिः ।४

पंच समिति ] ईर्याभाषैषणा दान निक्षेपोत्सर्गाः समितयः ।५

ईर्या समिति ]

भाषा समिति ]

ऐषणा समिति ]

आदान-निक्षेपण समिति ]

उत्सर्ग समिति ]

दशांग धर्म ] उत्तम क्षमा मार्दवार्जव सत्यशौच संयम तपस्त्यागाकिंञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि धर्मः ।६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


नवमोऽध्यायः

कर्मास्रव के रुक जाने को कहते हैं संवर जिनशास्त्र।
उसके साधे विना आत्मकल्याण न कर पाते सत्पात्र।।
मन बच काय तीन योगों का हलन चलन-निग्रह त्रयगुप्ति।
हिंसाचरण विहीन वृत्तिमय पंच समिति परिपालन युक्ति।। १

भव कष्टों से मुक्ति हेतु सुखमूल धर्मदश का अभ्यास।
द्वादश अनुप्रेक्षा अनुचिन्तन, निज स्वरूप में रमण प्रयास।।
परिषह-जय बाईस, पांच चारित्र व्रतों की नितप्रति सेव।
इन सब शुद्ध क्रियाओं से कर्मास्रव रुक जाता स्वयमेव।। २

तत्पश्चरण संवर उपजाता और निर्जरा हेतु निमित्त।
योगों की स्वच्छंद वृत्ति पर निग्रह करें गुप्ति त्रय मित्र।।
ईर्या भाषा समिति ऐषणा निक्षेपण-आदान पुनीत।
अरु उत्सर्ग समिति इन पांचों से मुनिगण नित रखते प्रीति।। ३

चार हाथ भू निरख गमन को ईर्या समिति कहें मुनिराज।
हितमित प्रिय बचनामृत-भाषा समिति बढ़ावै सुख-साम्राज्य।।
समिति ऐषणा अन्तराय विन लेना शुद्ध सरल आहार।
पुनि आदान सु निक्षेपण में पिछी आदि परिमार्जन सार।। ४

नित विवेक युत चर्या पालें साधु दिगम्बर सजग अतीव।
पुनि उत्सर्ग समिति में मलमूत्रादि तजैं लखि भू निर्जीव।।
उत्तम क्षमा, सु मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग।
आकिंचन, व्रह्मचर्य धर्म से दुष्ट कर्म रिपु जाते भाग।। ५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



अनुप्रेक्षा (द्वादश)] अनित्याशरण संसारैकत्वान्यत्वा शुच्यास्रव संवर निर्जरालोकबोधिदुर्लभ धर्मस्वाख्याततत्वानु चिन्तनमनुप्रेक्षाः।७

अनित्य अनु०

अनुशरणअनुप्रेक्षा]

संसारअनुप्रेक्षा]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अनुप्रेक्षा अनित्य अशरण संसारैकत्व तथा अन्यत्व।
अशुचि सु आस्रव संवर निर्जर लोक बोधि दुर्लभ के तत्व ।।
और धर्म स्वाख्याततत्वात्मक द्वादश अनुप्रेक्षा पहिचान।
बार बार इनके चिन्तन, अनुशीलन से होवे भव-हान ।। ६

तीन भुवन के अधिपती, चक्री राजा रंक।
आयु पूर्ण कर विवश हों, वने मृत्तिका पंक ।।
आयु न तिलभर बढ़ सकै, पल पल जीवन जाय।
सूर्य उदय से उदित दिन मिटा रात्रि रवि लाय ।। ७
यहां न कोई नित्य है नहिं शास्वत सुख लेष।
मृग-मरीचिका भ्रमित जग भोगे कष्ट विशेष ।।

भीम सरीखे बल-धनी, देव इन्द्र बलवान।
काल बली सबको दलै, शरण न कोई आन ।। ८
लंका धूं धूं जल गई, रावण सके न रोक।
बारह वरष विनाश के, भये द्वारिका शोक ।।
मृत्युकाल सब हों विवश, मात पिता परिवार।
देव सुगुरु आगम शरण, करै जीव उद्धार ।। ९

जन्म जरा मृतु-भीति से दुखी सभी संसार।
नारक पशु गति के विकट भोगे कष्ट अपार ।।
धन विन निर्धन जन दुखी, तृष्णावश धनवान।
क्षुधावेदनादिक सहै पशु अधमृतक समान। १०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


एकत्वअनुप्रेक्षा ]

अन्यत्वअनुप्रेक्षा ]

अशुचिअनुप्रेक्षा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


इस अपार संसार में धर्म मात्र जिय-मीत।
करुणाभावी जन करें शुभ करनी से प्रीति।।

जन्म मरण के काल यह जीव अकेला होय।
स्वारथ गुन माता पिता पत्नी लेतीं रोय।।११
सुख में सब साथी बनें सम्पति भागीदार।
रोग शोक दुख भीत के कोई न बांटनहार।।
जिस तन पोषण में मनुज जीवन देत लगाय।
साथ चले नहिं देह वह, जीव वृथा भरमाय।।१२

पर को अपना मानते अपना दिया लुटाय।
देह न अपनी हो सकी, धन सम्पति ललचाय।।
शास्वत निज निधि ज्ञानमय अमृत चखै न जीव।
मोह महामद मत्त हो, उल्टा चलै सदैव।।१३
निज के समता दया गुण में रमना ही सार।
पर क्रोधादिक जीव को देते कष्ट अपार।।

नव मलद्वार मलीन तन रुधिर राध मलखान।
ऐसे अशुचि शरीर की, क्यों न करें पहिचान।।१४
मल मल कर नित न्हवन कर किया सुगंधित लेप।
पाप मैल छूटा नहीं, जुडी पाप की खेप।।
रत्नत्रय तप में तपी अंतरंग बहि शुद्ध।
देह दिगम्बर मुनि धरैं, ध्यावें जिन्हें प्रबुद्ध।।१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


ास्रव अनुप्रेक्षा ]

ांवर अनुप्रेक्षा ]

ार्जरा अनुप्रेक्षा ]

लोक अनु० ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


मन बचकाय त्रियोग की चपल क्रि या का पाश।
कर्मों का आह्वान कर, ढकै आत्मगुण राशि।।
योग द्वार से आ घुसे कर्मचोर चहुँ ओर।
लूटें आतम निधि अमित फिर कुछ चले न जोर।। १६
आस्व के चिर रोग का खोजें गुणी उपाय।
कर्म दहन की भस्म से रोग भस्म हो जाय।।

शुद्ध आत्म के अमित गुण-पर केन्द्रित शुभध्यान।
जव स्वभाव में बस रहै, हो कर्मास्रव हान।। १७
गुप्ति समिति युत आचरण, अरु परिषह की जीत।
संयम श्रुत चारित्र में रहे निरन्तर प्रीति।।
नर गति में ही सध सके संयम वृत चारित्र।
जीवन के क्षण अमित निधि व्यर्थ न जावें मित्र।। १८

कर्म खिरैं जब फलित हों, होय न कारज सिद्ध।
कर्म झरैं जब तप करें, मिले मुकति की रिद्धि।।
पंच महाव्रत गुप्ति त्रय का पालन निर्दोष।
बाइस परिषह की विजय दे असीम संतोष।। १९
पर परिणति बन्धन करे हो न जीव स्वाधीन।
अपना स्वामी होय, जब कर्मबन्ध हो क्षीण।।

ज्ञानी जन चिन्तन करें, लोक स्वरूप सदैव।
इसमें जीव अनादि तैं भटक रहा वश दैव।। २०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



बोधि दुर्लभ अनु० ]

धर्मस्वाख्यातत्व अनु० ]

परीषह जय (२२) मार्गाच्च्यवन निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ।८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


ऊर्ध्व लोक में देवगण भोगें सुख, वृष भूल।
नर त्रियंच मधि लोक में सहें वेदना शूल।।
नरकों के घनघोर दुख कथन करे नहिं जांय।
दुख सागर इस लोक में, केवल धर्म सहाय।। २१

बड़े पुण्य से छूटकर नरक गती का साथ।
देवों को दुर्लभ मनुज योनि लगी अब हाथ।।
यम संयम से रत्नत्रय, दरश, ज्ञान चारित्र।
यदि पाया नहिं समझ लो व्यर्थ जनम है मित्र।। २२
समता क्षमा प्रमाण के सागर से ले बोध।
शिव पथ राही बन करो आत्मभाव परिशोध।।

इहभव परभव सुख भरै, धर्म करै कल्याण।
जीव दया, निजगुण रमण मात्र धर्म पहिचान।। २३
हिंसा नाशै धर्म को नरक पशूगति दैन।
पर को जीवन-अभय दे जियो, वीरप्रभु बैन।।
पर को दुख दे सुख चहै, कैसे सम्भव होय।
बोवै पेड़ बबूल का आम कहां तै होय।। २४

यों संसार शरीर निष्ठ कष्टों का चिन्तन बारम्बार।
दुःखों को कर दे अकष्टमय शान्ति सौख्य दे अपरम्पार।।
प्राणि जनों को जो दुख चुभते भीषण शूल सदृश विकराल।
शान्त भाव धर उनको सहना परिषह जय चारित्र विशाल।। २५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





| | |
|---|---|
| क्षुधा तृषा परीषहजय | क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंश मशक नाग्न्यारति स्त्रीचर्या |
| शीत, उष्ण परीषहजय | निषद्या शरयाक्रोशवध याचना लाभ रोग तृणस्पर्श |
| ५ दंशमशक परीषहजय | मल सत्कार पुरस्कार प्रज्ञा ज्ञानादर्शनानि ।९ |

६ नाग्न्य परीषहजय
७ अरुचि परीषहजय
८ स्त्री परीषहजय
९ चर्या परीषहजय
१० निषद्या परीषहजय

११ शय्या परीषहजय
१२ आक्रोष परीषहजय
१३ बध परीषहजय
१४ याचना परीषहजय
१५ अलाभ परीषहजय
१६ रोग परीषहजय
१७ तृणस्पर्श परीषहजय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


क्षुधा तृषा शीतोष्ण विपद पुनि दंशमशक पीड़ा कृत दोष।
नागन्यारति स्त्रीचर्या के कष्ट, निषद्या शय्याऽक्रोश।।
बध याचना अलाभ रोग अरु तृणस्पर्ण मल के संताप।
पुरस्कार-सत्कार सु प्रज्ञा अरु अज्ञान अदर्शन भाव।।२६

इन द्वयवीस परीषह कष्टों पर जो विजय लहें समदृष्टि।
देह जीव के भेद ज्ञान से भविजन होते सम्यग्दृष्टि।।
क्षुधा तृषा परिषह में क्र मशः भूख प्यास का हो न विकल्प।
शीत उष्ण में शीत उष्णजन कष्ट जगै मन में नहिं स्वल्प।।२७

दंश मशक में जीव जन्तु कृत पीड़ा सहन, धरैं समभाव।
नाग्न्य परीषह मुनि मुद्राप्रति खेद ग्लानि का निपट अभाव।।
निर्जन बन एकान्तवास में प्रीति परीषह अरुचि प्रसिद्ध।
स्त्री परिषह जय नारी के भाव, जीत, मन रखना शुद्ध।।२८

चर्या की बाधाओं का समता से सहना चर्या जान।
और निषद्या आसन कृत बाधाओं पर नहिं देना ध्यान।।
शय्या विजय, कठोर भूमि पर इक करवट से शयन विचार।
जय आक्रोष दुष्ट वचनों पर मन में लेश न द्वेष विकार।।२९

वध परिषह जय, सह प्रहार रखना निर्मल भावना विशुद्ध।
पुन प्राणार्थ भोजनादिक याञ्चा-विरक्ति, याचना प्रसिद्ध।।
भिक्षा ग्रहणयोग टलने पर भिक्षा के प्रति लेष न चाह।
भिक्षा अन्तराय से विचलित नहिं होना ही विजय अलाभ।।३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



१६. रोग परषिह जय

१७. तृण स्पर्श परीषह जय

. १८ मल परीषह जय

१९ सत्कार पुरस्कार परीषह जय

२० प्रज्ञा परीषह जय

२१ अज्ञान परीषह जय

२२ अदर्शन परीषह जय

| | |
|---|---|
| १०-१२ गुणस्थानों में परीषह | सूक्ष्म साम्पराय छद्मस्थ वीतरागयोश्चतुर्दश ।१० |
| जिन भगवान के परिषह] | एकादश जिने ।११ |
| बादर साम्यराय गुण में परषिह] | बादर साम्पराये सर्वे ।१२ |

ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ।१३

दर्शनमोहान्तराययो रदर्शन लाभौ ।१४

चारित्रमाहै नाग्न्यारति स्त्रीनिषधाक्रोश याचना सत्कार पुरस्कारा: ।१५

वेदनीये शेषा: ।१६

एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नेकोन विशंति: ।१७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



रोग परीषह जय सु व्याधि पीड़ा का सहन, धरैं सन्तोष।
तृण-स्पर्श परिषह जय में तृण कष्टक कष्ट न करें अतोष।।
मल परिषह जय - स्वेदादिक सह स्नानादिक का रहे न चाव।
पुनि सत्कार-विजय में आदर और उपेक्षा से न लगाव।। ३१
प्रज्ञा परिषह ज्ञानी होकर ज्ञान बुद्धि का तनिक न मान।
अतिशय ज्ञान लब्धि बिन मन में खेद न हो, परिषह अज्ञान।।

दुर्धर तत्पश्चरण पर भी यदि रिद्धि सिद्धि का रहे अभाव।
हो न अश्रद्धाभाव, अदर्शन-परिषह-जय का विमल प्रभाव।। ३२

सूक्ष्म साम्यरायी अथवा क्षद्मस्थ बीतरागी जे जीव।
चौदह परिषह विजय प्राप्त कर मोह महल की रखते नींव।।
तेरह गुणस्थानवर्ती जिन को ग्यारह परिषह सम्भाव्य।
बादर साम्यराव छठवें से नवम गुणी तक सब सम्भाव्य।। ३३

प्रज्ञा अरु अज्ञान परीषह ज्ञानावरण उदय का मूल।
दर्शन-मोह उदय आने पर बने अदर्शन परिषह शूल।।
अन्तराय के उदय काल होता अलाभ परिषह का योग।
आत्मगुणों को कुन्दन सम जग मग करता परिषह जय योग।। ३४

नाग्न्य अरति स्त्री निषद्य आक्रोष याचना अरु सत्कार।
चरितमोह कर्मोदय मूलक, इन पर विजय करे उद्धार।।
वेदनीय कर्मोदय से अवशेष एक दश (११) कहें यतीश।
एक आदि ले अधिकाधिक युगपत परिषह होते उन्नीस।। ३५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





**चारित्र-वृत्ति**

| | |
|---|---|
| ५ चारित्र-भेद ] | सामायिकच्छेदोपस्थापना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यातमिति चारित्रम् ।१८ |

सामायिक-चारित्र ]
छेदोपस्थापना चारित्र ]

परिहार विशुद्धि चारित्र ]

शूक्ष्म साम्पराय चारित्र ]

यथाख्यात चारित्र ]

| | |
|---|---|
| वाह्यतप<br>अनशन-तप ]<br>अवमौदर्य तप ]<br>वृत्ति-परिसंख्यान तप ]<br>रस परित्याग तप ] | अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यान रस परित्याग विविक्तशय्यासन काय क्लेषाः बाह्यं तपः ।१९ |

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


अव वर्णन चारित्र वृत्ति का जिससे होती आतम शुद्धि।
लोभक्षरण अरु मोह नाश से आत्मगुणों की सकल समृद्धि।।
सामायिक छेदोपस्थापन अरु चारित परिहार विशुद्धि।
शूक्ष्म साम्यरायिक अरु पंचम यथाख्यात चारित्र प्रसिद्ध।। ३६

तप सयम में ऐक्य धार एकाग्र रूप से निज का ध्यान।
विरत रहें सावद्य योग से सामायिक साधक गुणवान।।
छेदोपस्थापन चरित्र में यदि प्रमादवश दोष लगाव।
पाकर मुक्ति विकल्पों से पुन सरलवृत्ति मय रखे स्वभाव।। ३७

पुनि परिहार विशुद्धि, जीव हिंसा का निपट रहे परिहार।
स्वात्मबुद्धि लवलीन पने से हो चारित्र विशुद्धि अपार।।
लोभादिक का उदय नहीं बस, सूक्ष्म लोभ का उदय विचार।
सूक्ष्म साम्परायिक चरित्र दशवें गुणथानी का आगार।। ३८

जहां कषायों का न उदय केवल उपशम मय भाव वितान।
यथाख्यात चारित्र शुद्ध-चेतन परिणति पर केन्द्रित ध्यान।।
अनशन अवमौदर्य बाह्यतप, एवम् वृत्ति परीसंख्यान।
रस परित्याग, विविक्तासन शय्यायुत कायक्लेश षटमान।। ३९

अनशन तप में तपोवृद्धिहित ही भोजन, अनशन में दृष्टि।
अवमौदर्य व्रती को न्यून अशन से हो जाती संतुष्टि।।
कठिन नियम आहारवृत्ति हित होता वृत्ति-परी संख्यान।
घृत दुग्धादि रसों का सीमित सेवन रस-परित्याग महान।।४०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


विविक्त शय्यासन तप ]
कायक्लेश तप ]
अभ्यंतर तप ]
प्रायश्चित तप, विनय तप ] प्रायश्चित विनय वैय्यावृत्य स्वाध्याय व्युत्सर्ग

वैयावृत्ति तप, स्वाध्याय तप ] ध्यानान्युत्तरम् ।२०
व्युत्सर्ग तप, धर्मध्यान तप
तप प्रभेद ] नव चदुर्दशपञ्चद्विभेदा यथाक्रमम् प्राग्ध्यानात् ।२१

९ प्रायश्चित तप ] आलोचना प्रतिक्रमण तदुभयविवेक व्युत्सर्गतपश्छेद
परिहारोवस्थापना: ।२२

आलोचना तप ]
प्रतिक्रमण तप ]
आलोचना-प्रतिक्रमण तप ]
विवेक तप ]
व्युत्सर्ग तप ]

दीक्षा-छेदन तप ]
परिहार विशुद्धि तप ]
उपस्थापना तप ]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


तप विविक्त शय्यासन में निर्वाध भूमि, एकान्त प्रवास।
काय क्लेष में कष्ट-विजय दे निराबाध सुख का आभास।।
षट आभ्यन्तर तप, प्रायश्चित विनय सु वैय्यावृत्ति महान।
पुनि नियमित स्वाध्याय और ब्यु त्सर्ग, छठा होता है ध्यान।।४१

ब्युत्सर्गावधि तप नव, चतु, दश, पंच और दो भेद सुजान।
तत्पश्चरण ही कर्मशैल भंजन हित होता वज्र समान।।
प्रायश्चित तप नव (९) प्रकार का कहा गया जिनमत अनुसार।
आलोचना प्रतिक्र मणात्मक तीजा उभयमिश्र गुणसार।।४२

पुनि विवेक, व्युत्सर्ग, तपश्चर्या, दीक्षा छेदन परिहार।
उपस्थापना, इस प्रकार नव (९) विध हो प्रायश्चित तपसार।।
गुरुसमक्ष निज दोष निरूपण-आलोचना करे मन शुद्धि।
प्रतिक्र मण में "मिथ्या हों मम दोष" निवेदन करें प्रबुद्ध।।४३

गुरु द्वारा प्रायश्चितपूर्वक प्रति-क्र मण तदुभय तपनाम।
तप विवेक प्रायश्चित में स्वविवेक बुद्धि से संयत काम।।
अहंकार ममकार निवारक कायोत्सर्ग कहा ब्युत्सर्ग।
तप प्रायश्चित-तत्पश्चरण से दोषों का करना उत्सर्ग।।४४

दीक्षा का छेदन होता "प्रायश्चित छेद" कहें जिनशास्त्र।
कालावधि कृत संघत्याग'परिहार' करें निर्मल सत्पात्र।।
उपस्थापना प्रायश्चित में पदच्युत रह करके कुछ काल -
दीक्षा पुन: ग्रहण करके काटे कर्मों का बन्धन जाल।। ४५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


४ विनय तप] ज्ञान दर्शन चारित्रोपचाराः ।२३

१० वैयावृत्त तप] आचार्योपाध्याय तपस्विशैक्ष्य ग्लानगण कुल संघ साधुमनोज्ञानाम् ।२४

५ स्वाध्याय तप] बाचनापृच्छनानुप्रेक्षा ऽऽम्नाय धर्मोपदेशाः ।२५

बाचना, तप
पृच्छना तप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


शक्ति और सामर्थ्य सोचकर देश काल का रखकर ध्यान।
गुरुजन प्रायश्चित बतलाकर शिष्यों का करते कल्याण।।
विनय नाम तप चार भेद मय, विनय ज्ञान दरशन चारित्र।
पूज्यनीय के प्रति आदर उपचार-विनय कहलाती मित्र।।४६

उमास्वामि कृत सूत्र कहें, तप वैयावृत्ति रहे दश अंग।
आचार्यौपाध्याय तपस्वी शैक्ष ग्लान गण कुल मुनिसंघ।।
साधु मनोज्ञ श्रेणिदश मंडित मुनिगण सेवा विविध प्रकार।
श्रद्धाभाव सहित करने से भक्त करें निज पर उद्धार।।४७

संघशीर्ष आचार्य कहाते, उपाध्याय श्रुतज्ञान प्रवीण।
सकल व्रती प्रणवीर तपस्वी साधु कषाय मोह मल क्षीण।।
शिक्षा-गृहण भावना भूलित शैक्ष्य मुनीश्वर जग में धन्य।
रोगादिक से ग्रसित साधुगण संज्ञा ग्लान लहें अविपन्न।।४८

विविध योग्यता मूलक वर्गों में वर्गीकृत हैं गण साधु।
शिष्य वर्ग कहलाते कुल पुनः श्रमण चतुष्टय संघ अगाध।।
जो चिरकाल प्रव्रज्याधारी उन्हें साधु पदवी सम्प्राप्त।
श्रावक श्रमण समाज मध्य अति आदर पात्र मनोज्ञ प्रख्यात।।४९

तप स्वाध्याय पंचविध है बाचना और प्रच्छना सुकार्य।
अनुप्रेक्षा आम्नाय और धर्मोपदेश कहते आचार्य।।
ग्रंथ अर्थ का पठन भलीभाँति, दोष रहित बाचना प्रणीत।
शंका निराकरण हित प्रश्नों का करना प्रच्छना पुनीत।।५०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


१२७

अनुप्रेक्षातप
आम्नाय तप
धर्मोपदेश तप
२ व्युत्सर्ग तप]

(बाह्य उपधि) बाह्याभ्यन्तरोपध्योः।२६
(आभ्यान्तर उपधि)
४ ध्यान तप] उत्तमसंहननस्यैकाग्र चिन्तानिरोधोध्यान-
मान्तर्मुहूर्तात्।२७

आर्तरौद्र धर्म्यशुक्लानि।२८
परेमोक्षहेतू।२९

आर्तध्यान] आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे
तद्विप्रयोगायस्मृतिसमन्वाहारः।३०
विपरीतं मनोज्ञस्य।३१
वेदनायाश्च।३२

निदानं च।३३

तदविरत देशविरत प्रमत्त संयतानाम्।३४

रौद्रध्यान] हिंसानृतस्तेयविषय संरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत देश
विरतयोः।३५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


पठित पाठ को बार-बार चिन्तन है अनुप्रेक्षा - स्वाध्याय।
पुनः पुनः उच्चारण को आम्नाय नाम देंते मुनिराय ।।
धर्म कथा - धर्मोपदेश-स्वाध्याय करे भावों की शुद्धि।
अब ब्युत्सर्ग तपश्चर्या के द्विविध भेद कह रहे प्रबुद्ध ।।५१

बाह्यभ्यन्तर परिग्रह में ममकार भाव निर्वृत्ति स्वरूप।
तप व्युत्सर्ग द्विविध परिभाषित उपधि बाह्य अभ्यंतर रूप ।।
उत्तम सहनन धारी के अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त प्रमाण।
मन की एकाग्रता विहित चिन्ता निरोध कहलाता ध्यान ।।५२

आर्तरौद्र अरु धर्म शुक्ल ये चार प्रकार ध्यान के रूप।
अति रौद्र द्वय अशुभ रूप हैं शेष मोक्ष साधक सुखपूर ।।
आर्तध्यान के भेद चतुष्टय में अनिष्ट संयोजक पाश।
इष्ट वियोजक, दुख वेदनकृत अरु निदान, चारों दुखराश ।।५३

दूर हटे अमनोज्ञ, अनिष्ट कु संयोजक में हो नित चाह।
इष्ट वियोजक आर्तध्यान में जन मनोज्ञ की देखे राह ।।
आर्त वेदना जनित काय के कष्टों का मन में नित ध्यान।
विषय भोग आकांक्षा चिन्तन रूप निदान आर्त पहिचान ।।५४

अविरत देश विरत प्रमत्र संयत गुण थानी हैं जो जीव।
आर्त ध्यान उनके ही सम्भव कष्ट वेदना मूल अतीव ।।
रौद्र ध्यान हिंसा असत्य चोरी परिग्रह से लिप्त विचार।
अविरत देश विरत् गुण-थानों में इनका अस्तित्व प्रसार ।।५५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


१२९

धर्मध्यान (४) आज्ञापाय विपाक संस्थान विचयाय धर्म्यम् ।३६

आज्ञाविचय धर्म्यध्यान तप ]

अपाय विचय धर्म्यध्यानतप ]

विपाकविचय धर्म्यध्यान ]

संस्थान विचय धर्म्यध्यान ]

४ शुक्लध्यान ] शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ।३७

परे केवलिनः ।३८

प्रथक्त्वैकत्ववितर्क सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति व्युपरत क्रिया निवर्तीनि ।३९

(प्रथक्त्व वितर्क
शुक्ल ध्यान)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


धर्मध्यान् चतुर्भेदी, आज्ञा विचय, अपाय विचय शुभध्यान।
अरु विपाक, संस्थान विचय, स्वामी चतु से सप्तम गुणथान।।
वस्तु स्वरूप विचार समय जिन बच, आज्ञा को रखना मान्य।
मन में इस प्रकार चिन्तन को आज्ञा-विचय कहें मतिमान।।५६

होकर के सन्मार्ग विमुख मिथ्यामग भटक रहे जो जीव।
उन्हें सुपथ में लाने का शुभ ध्यान, अपाय-विचय की नींव।।
द्रव्य क्षेत्र भव भाव आदि अनुरूप कर्मफल की पहिचान।
जहां ध्यान का विषय वने सु, विपाक-विचय कहते मतिमान।।५७

लोकाकार स्वरूप चिन्तवन से मन को रखना सम्बद्ध।
धर्मध्यान संस्थान-विचय का जानों बाह्यरूप प्रतिवद्ध।।
शुक्ल ध्यान के भेद चार वर्णित, प्रथक्त्व एकत्व वितर्क।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपातिक व्युपरत क्रिया निवर्ति ध्यान संवर्ग।।५८

प्रथम शुक्ल द्वय के अधिकारी मनुज पूर्व विद होते पात्र।
जिनमत कहता धर्मध्यान केभी स्वामी ये होते भ्रात।।
उपशम श्रेणि गुणस्थानों में क्षपक श्रेणि दशवें तक आदि।
अन्तिम शुक्ल युगल केबलि के, जिनमत का यह कथन अनादि।।५९

प्रथम प्रथक्त्व वितर्क शुक्ल वीचार ध्यान का कहें स्वरूप।
श्रुत ज्ञानाश्रय युक्त अर्थ-व्यंजन-योगों का संक्र म रूप-
द्रव्यंरूप, पर्यायरूप, त्रय योगालम्वन मय शुभ ध्यान-
कर्म घातिया क्षयी प्रयक्त्व वितर्क शुक्ल की है पहिचान।।६०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





(एकत्ववितर्क)
शुक्लध्यान

(सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति)
शुक्लध्यान

व्युपरत क्रिया निवर्ति)
शुक्लध्यान

त्र्ये कयोग काययोगा योगानाम् ।४०

एकाश्रये सवितर्क वीचारेपूर्वे ।४१
अवीचारं द्वितीयम् ।४२
वितर्कः श्रुतम् ।४३
वीचारोर्थ व्यञ्जन योगसंक्रान्तिः ।४४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0-In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


श्रुत आश्रित हो, एकद्रव्य चिन्तन होता एकत्व वितर्क।
एकयोग, पर्याप्त, द्रव्य, शब्दालम्बन से धर सम्पर्क-
ध्यान मग्न हो, धाति कर्म की शेष प्रकृतियों का कर दाह-
केवल ज्ञान लहें जो वे एकत्व वितर्क ध्यान की राह।।६१

सूक्ष्म-क्रि या-प्रतिपाति ध्यान के समय योग का रहे निरोध।
अन्य सभी योगों से हटकर सूक्ष्मकाय योगाश्रित बोध।।
कायवर्गणा-परिणत आत्मप्रदेशों का स्पन्दन मात्र।
परमशुद्ध वह ध्यान निरूपित, केवल ज्ञानी इसके पात्र।।६२

आत्म प्रदेशों की स्पन्दक स्वासोच्छ्वास क्रि या संयुक्त।
व्युपरत-क्रि या निवर्ति ध्यान भव बन्धन से कर देता मुक्त।।
तीन योग, कोई एक योग, वस काययोग पुन योग विहीन।
भव्य जीव चतु शुक्ल ध्यान के क्र मशः स्वामी रहें प्रवीन।।६३

गुणस्थान अष्टम से दशवें तक हो पहिला शुक्ल सु ध्यान।
हो एकत्व वितर्क वारवें गुणस्थान में, रखना ज्ञान।।
सूक्ष्मक्रि या प्रतिपाति तेरवें गुणस्थान में अन्तिमं काल।।
व्युपरत क्रि या-निवर्ति चौदवें गुणस्थान में अमल विशाल।।६४

प्रथम शुक्ल द्वय ध्यानों के स्वामी श्रुतज्ञानी रहें सदैव।
युत वितर्क वीचार प्रथम, वीचाररहित हो इतर तथैव।।
बीविध दृष्टि संगत विचार-धारा वितर्क श्रुत ज्ञान समृद्ध।
अर्थयोग व्यंजन परिवर्तन रूप ध्यान वीचार प्रसिद्ध।।६५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





१० स्थानों में कर्मनिर्जरा] सम्यग्दृष्टिश्रावक विरतानन्त वियोजक दर्शनमोहक्षपकोपशमोपशान्त मोह क्षपकक्षीण मोह जिना: क्रमशोऽसंख्येय गुण निर्जरा: ।४५

निर्गृंथ भेद] पुलाक वकुश कुशील निर्ग्रंथस्नातका: निर्ग्रंथा: ।४६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


कर्म निजरा क्रम कहते, सत्पात्रों पर कर दया मुनीश।
सम्यक दृष्टी भव्य, पांचवें गुण-वर्ती श्रावक गुणशीर्ष -
विरत-महाव्रति और जिनके हो अनन्तानुबन्धी की जीत।
दर्शन मोहक्षयी सुभव्य, चारित्रमोह उपशमक पुनीत।।६६

मुनि-उपशान्त मोह गुण वाले, क्षपक श्रेणि आरूढ़ मुनीन्द्र।
क्षणि मोह वाले द्वादश गुणथानी श्री भगवान जिनेन्द्र।।
सभी उत्तरोत्तर असंख्य गुण रूप निर्जरा स्वामी भव्य,
पाप विकारों की घटती परिणति से करें धन्य जीतव्य।।६७

पांच वर्ग निर्गृंथ पुलाक बकुश कुशील निर्गृंथ यतीश।
अरु पंचम स्नातक हों, सब धरैं दिगम्बर वेष मुनीश।।
ममता मोह जयी मुनिवर होते पुलाक निर्मल गुणखान।
किञ्चित न्यून मूलगुण गरिमा, उत्तर गुण की ओर न ध्यान।।६८

बकुश-मूलगुण उज्वलधारी, करते कायादिक संस्कार।
ऋद्धि और यश अभिलाषी, परिवार लिप्त ममभाव-विकार।।
पुनि कुशील निर्गृंथ, मूल उत्तर गुणधारी ग्रंथासक्त।
अन्य कषाय विजित करलीं बस मात्र संज्वलन से संत्रस्त।।६९

मुनि निर्ग्रंथ यतीश्वर करते रागद्वेष का पूर्ण अभाव।
मोह क्षयी अरु शेष घातियां जल रेखा सम रखें प्रभाव।।
चार घातिया कर्म जयी भगवान केवली परम प्रबुद्ध।
वे स्नातक निर्गृंथ कहाते ज्ञान शरीरी अनुपम शुद्ध।।७०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri





निर्ग्रंथों की विशेषता] संयमश्रुत प्रतिसेवनातीर्थलिंङ्ग लेश्योपपाद स्थान विकल्पतः साध्याः ।४७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


संयम श्रुत प्रति सेवना सु लेश्या उपपाद तीर्थ संस्थान।
लिंग, अष्ट गुण वृद्धि परख मुनिगण में भेद करें मतिमान।।७१

इति नवमोऽध्यायः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


केवलज्ञान उत्पत्ति
मोहक्षयाज्ज्ञान दर्शनावरणांन्तराय क्षयाच्च केवलम् ।१

मोक्ष-स्वरूप ]
बन्धहेत्वाभाव निर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म विप्रमोक्षो मोक्षः ।२

मोक्ष होने की स्थिति में भावों का अभाव ]
औपशमिकादि भव्यत्वानां च ।३

अन्यत्रकेवल सम्यक्त्वज्ञान दर्शन सिद्धत्वेभ्यः ।४

मोक्ष होते ही जीव स्थिति ]
तदन्तरमूर्ध्वं गच्छन्त्यालोकान्तात् ।५

पूर्वप्रयोगादसंङ्गत्वाद बन्धच्छेदात्तंथागति परिणामाच्च ।६

ऊर्ध्वगमन में हेतु ]
आविद्धकुलाल चक्रवद् व्यपगत लेपालाम्बुवदेरण्डवीज वदग्नि शिखावच्चं ।७

लोकाग्र सीमा पर स्थिति का कारण ]
धर्मास्तिकायाभावात् ।८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


दशमोऽध्यायः

मोह कर्म के मूलनाश से द्वादश गुणस्थान कर पार।
ज्ञान दर्शनावरण कर्म संग अन्तराय को करके क्षार।।
केवल ज्ञान उदित हो जाता कोटिसूर्य सम आभावान।
सर्वद्रव्य पर्यायों का युगपत परिदर्शक, ज्योति वितान।। १

बन्ध कारणों के अभाव से कर्म निर्जरा जनित समस्त -
कर्मों के क्षय हो जाने से मोक्ष प्राप्ति हो परम प्रशस्त।।
मुक्त जीव के औपशमिक आदिक भावों का रहे न लेश।
परम सिद्ध पद पा जाने से मिट जाता भव्यत्व अशेष।। २

मुक्तों के सम्यक्त्व सु केवल ज्ञान और दर्शन गुण राशि -
अरु सिद्धत्व भाव छा जाते, कर्मबन्ध का लेष न पाश।।
कर्मबन्ध से मुक्त जीव पुन ऊर्ध्वगमन में होता लीन।
लोकाकाश ऊर्ध्व तक जाता, धर्मद्रव्य सह, हो स्वाधीन।। ३

ऊर्ध्वगमन के चार हेतु हैं युग युगानुवर्ती संस्कार।
संग-शून्यता, वंधनाश पुनि, गति ऊपर स्वभाव अनुसार।।

कुम्भकार के चलित चक्र सम, पूर्व प्रयोग रूप संस्कार।
गलित लेप (पंक) तुम्बी समान भविजीत संग का धोकर भार।।४
अण्डवृक्ष के बीज सदृश जो पककर चिटकें उरध लोक।
अग्नि शिखा सम, निज स्वभाव से उर्ध्वगमन में हो नहिं रोक।।
लोकाकाश अग्र सीमा से ऊपर गमन न करते जीव।
धर्मद्रव्य का निपट अभाव अलोक मांगि, ही हेतु अतीव।।५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri


१३९
१२ विशेषताओं के माध्यम से भेद]

क्षेत्रकाल गति लिंङ्ग तीर्थ चारित्र प्रत्येक बुद्धबोधित ज्ञानावगाहनान्तर संख्याल्य बहुत्वतः साध्याः।९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri



क्षेत्रकाल, गति, लिंग, तीर्थ, चारित, प्रत्येक बुधबोधित ज्ञान।
अवगाहन, अन्तर संख्या अरु अल्प बहुत्व रूप पहिचान।।
मुक्ति पूर्व पर्याय विहित इतिहास रूप द्वादश अनुयोग।
निश्चयतः निर्भेद सिद्ध जीवों में बने भेद के योग।।

इति दशमोऽध्याय।
पूज्यवाद मुनिवर उमास्वामि विरचित
तत्वार्थ सूत्र पर आधारित
तत्वार्थ सूत्र - पद्याञ्जांजलि

रचना के अन्त में

पूज्य उमास्वामी विरचित तत्वार्थ सूत्र का गीत प्रबन्ध।
भव्यों को शिवमग साधक वन करे शिथिल कर्मोंकि बन्ध।।

परमपूज्य चारित्रचक्रि "विद्या सागर" को अर्पित ग्रंथ।
जिनके ज्ञान दरश से प्रेरित भव्य अनेक वने निर्ग्रंथ।।
यह 'पद्याञ्जलि' हुई परिष्कृत और प्रतिष्ठित जिनके हाथ।
विद्यासागर शिष्य क्षमासागर मुनिराज तत्व निष्णात।
समता सागर के प्रबोध ज्ञानार्णव से होकर परिशुद्ध।
नय प्रमाण ज्ञानी प्रमाण सागर से शोधित हुई समृद्ध।।

सम्वत् पच्चिस सौ अठ्ठारह वीर जिनेश्वर का निर्वाण।
आश्विन शुक्ला चतुर्दशी को विदिशा नगरी पा शुभथान।।
रत्नत्रयी क्षमासागर मुनिवर समता सागर निर्ग्रंथ।
अरु प्रमाण सागर सन्मुख बाचन कर हुआ परिष्कृत ग्रंथ।।

ले आश्रय 'सर्वार्थसिद्धि' का विस्तृत वर्णन हुआ सुरम्य।
भूल चूक की क्षमा याचना करते धन्नालाल विनम्र।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

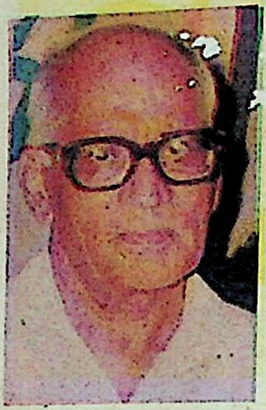

स्व० श्री माणिक चन्द्र जी जैन

बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी स्व० श्री माणिक चन्द्र जी जैन "भैया जी" कर्मठ, धर्मपरायण एवं सौम्यता की प्रतिमूर्ति थे। मध्य प्रदेश के मुंगावली नगर में जन्मे भैया जी ने काका कुञ्जीलाल के संरक्षण में अपना सर्वांगीण विकास किया। टी०टी० नगर, भोपाल में देहली स्वीट हाउस तथा वर्धमान एजेन्सीज प्रतिष्ठानों की नींव रखी और सुपुत्रगण श्री अभिनन्दन व अभय कुमार को सोपकर आप समाज सेवा में अग्रणी रहे।
आपकी स्मृति में 5,000=00 की सहायता इस शास्त्र के मूल्य ह्रास हेतु प्राप्त हुई है।

---

श्री रुद्र प्रताप जी जैन

श्री रुद्रप्रताप जी, नवाबगंज कानपुर (सेवा नि० सहायक निदेशक उद्योग, उ० प्र० शासन) जन्मत: ही धार्मिक रुचि वाले उदारमना व्यक्ति हैं। आवासीय प्रांगण में स्थित जिनालय में आप नित्य प्रति पूजन करते हैं लमेचू गोत्रीय अपने भरे पूरे परिवार के आप ज्येष्ठ व्यक्ति हैं।
इस शास्त्र के मूल्य ह्रास हेतु आपने 5000=00 सहायता प्रदान की है। जन्म 11.12.21

---

प्रकाशक

सन्मति जैन परिषद
सीसामऊ, कानपुर

जैन मिलन
कानपुर

पुस्तक प्राप्ति स्थान

मंत्री जैन मिलन
118/179, कौशलपुरी, कानपुर

वीर श्रीपाल जैन
110/31, जवाहर नगर, कानपुर

प्र० मु० 2,000 मूल्य 12=00 मुद्रक - दि विवेक प्रेस, कानपुर-१२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi